वैदिक युग एवं रामायण काल की ऐतिहासिकता

समुद्र की गहराइयों से आकाश की ऊँचाइयों तक के वैज्ञानिक प्रमाण

सरोज बाला
अशोक भटनागर
कुलभूषण मिश्र

वैदिक युग एवं रामायण काल की ऐतिहासिकता

समुद्र की गहराइयों से आकाश की ऊँचाइयों तक के वैज्ञानिक प्रमाण

(संक्षिप्त संस्करण)

सरोज बाला

अशोक भटनागर

कुलभूषण मिश्र

वेदों पर वैज्ञानिक शोध संस्थान (आइ-सर्व)
Institute of Scientific Research on Vedas (I-SERVE)

वैदिक युग एवं रामायण काल की ऐतिहासिकताः समुद्र की गहराइयों से आकाश की ऊँचाइयों तक के वैज्ञानिक प्रमाण

ISBN No: 978-93-81391-04-4
2013 में प्रकाशित
वेदों पर वैज्ञानिक शोध संस्थान (आइ-सर्व)
Institute of Scientific Research on Vedas (I-SERVE)
(भारत सरकार के DSIR द्वारा SIRO के रूप में मान्यता प्राप्त और आयकर अधिनियम की धारा 35(i)(ii) के अधीन अधिसूचित)
मकान नं. 11-13-279, रोड नं. 8, अल्कापुरी, हैदराबाद-500035
ई-मेल: delhichapter@serveveda.org
वैबसाइट: www.serveveda.org

सम्पादक
सरोज बाला
अशोक भटनागर
कुलभूषण मिश्र

मुद्रक
लेज़र टेक प्रिन्ट्स,
नई दिल्ली

आइ-सर्व, दिल्ली शाखा से यह पुस्तक प्राप्त की जा सकती है
C-II/107, सत्य मार्ग, चाणक्यपुरी, नई दिल्ली-110021
दूरभाष-09811343548/ 9582158787
ई-मेल-sarojbala044@gmail.com

राष्ट्रीय संगोष्ठी

विषय

'2000 वर्ष ई.पू. से पहले की प्राचीन घटनाओं का वैज्ञानिक तिथि निर्धारण'

प्लैनेटेरियम साफ्टवेअर के उपयोग से प्राचीन संस्कृत पुस्तकों व पांडुलिपियों में ग्रहों तथा नक्षत्रों के संदर्भों का खगोलीय समय निर्धारण

और

इन खगोलीय तिथियों का पुरातत्व, भूविज्ञान, मानवविज्ञान, पुरावनस्पतिविज्ञान, समुद्र विज्ञान, पारिस्थितिकीय अध्ययन व उपग्रह चित्रों से परस्पर सम्बन्ध

आइ-सर्व, दिल्ली शाखा

द्वारा आयोजित
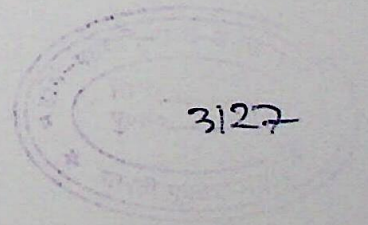
नई दिल्ली, 30-31 जुलाई, 2011

(इस पुस्तक में संगोष्ठी की कार्यवाही का सारांश सम्मिलित है)

वैदिक युग एवं रामायण काल की ऐतिहासिकता

समुद्र की गहराइयों से आकाश की ऊँचाइयों तक के वैज्ञानिक प्रमाण

विषय-सूची

भूमिका

1. विश्व का अब तक का इतिहास, विशेष रूप से भारतीय उप-महाद्वीप का, अधिकतर भाषाई अनुमानों, धार्मिक आस्थाओं अथवा जन-श्रुतियों पर आधारित रहा है। विगत 30-40 वर्षों में ऐसी कई नयी वैज्ञानिक विधाओं तथा उपकरणों का विकास हुआ है जिनसे प्राचीन घटनाओं की तिथियों का वैज्ञानिक रीति से सही-सही निर्धारण किया जा सकता है। उदाहरणार्थः

(*i*) ग्रहीय सन्दर्भों की खगोलीय गणना हेतु प्लेनेटेरियम सॉफ़्टवेयर,

(*ii*) उपग्रह आधारित सुदूरसंवेदन की विधा,

(*iii*) पानी के नीचे उत्खनन एवं जिओस्पेशिअल विधियाँ,

(*iv*) रेडियो कार्बन डेटिंग, थर्मोल्युमिनिसैंस डेटिंग,

(*v*) मानव जीनोम के अध्ययन, जैविक एवं सांस्कृतिक मानव-विज्ञान,

(*vi*) पुरावनस्पतियों, पुराजीवों एवं पुराजलवायु के अध्ययन,

(*vii*) भौगोलिक एवं भूगर्भीय शोध के साधन आदि।

2. उपर्युक्त समय में विभिन्न विषयों को समाहित करते हुए वैज्ञानिक विधियों और उपकरणों पर आधारित वैज्ञानिक शोध से ऐसे अनेक रिपोर्ट प्रकाशित हुए हैं जो प्राचीन घटनाओं की ऐतिहासिक प्रामाणिकता एवं उनकी तिथियों का ठीक-ठीक निर्धारण करते हैं; फलतः प्राचीन पुस्तकों एवं पांडुलिपियों की विश्वसनीयता बढ़ गयी है। इंस्टिट्यूट ऑफ़ साइंटिफिक रिसर्च आन वेदाज (आइ-सर्व) की दिल्ली शाखा ने ऋग्वेद से आर्यभटियम के मध्य हुई प्राचीन घटनाओं के वैज्ञानिक तिथिकरण हेतु शोध कार्य का बीड़ा उठाया जिसके दो भाग थेः

- प्लैनेटेरियम सॉफ़्टवेयर की मदद से प्राचीन संस्कृत ग्रंथों में वर्णित ग्रहीय विन्यासों का खगोलीय तिथिकरण और
- प्राप्त तिथियों का पुरातात्त्विक, मानव-विज्ञानी, पुरावानस्पतिक, भूगर्भीय, पुरा-पर्यावरणीय, सामुद्रिक और सुदूर संवेदन से प्राप्त अन्य प्रमाणों से सह-सम्बन्ध स्थापित करना।

3. शोध हेतु टीम ने अधोलिखित दो उद्देश्यों के साथ कार्य आरम्भ किया:

- अब किसी धार्मिक विश्वास अथवा भाषाई अनुमानों पर निर्भर रहने की आवश्यकता नहीं रह गयी है क्योंकि नये वैज्ञानिक संसाधनों और आविष्कारों से प्राचीन घटनाओं के ऐतिहासिक होने की तथा उनके प्रामाणिक होने की पुष्टि की जा सकती है। वैज्ञानिक तिथिकरण की ऐसी विधाएं न केवल मान्य व विश्वसनीय है अपितु वे हमारी सभ्यता की प्राचीनता को चार या पाँच सहस्त्र वर्ष और पीछे ले जाने की संभावना दर्शाती है तथा हम सभी भारतीयों को एक ही पैतृक एवं समृद्ध संस्कृति के अंग होने का गर्व प्रदान करती है।
- केन्द्रीय एवं राज्य सरकारों को इन शोध परिणामों को पूरे भारत के स्कूलों एवं कालेजों की पाठ्य पुस्तकों में सम्मिलित करने हेतु सहमत करना होगा जिससे युवा वर्ग अपने इतिहास की सच्चाई को, जिसका पुनरालेख विशुद्ध वैज्ञानिक आधार पर किया गया है, जान और समझ सके। सम्बंधित शोध की रिपोर्टें विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी, पृथ्वी-विज्ञान, जल-संसाधन एवं संस्कृति मंत्रालयों में उपलब्ध हैं।

4. डॉ. डी. एस. कोठारी ने जो स्वयं एक ख्याति प्राप्त परमाणु वैज्ञानिक थे, एक बार यह कहा था कि, ''भारतीयों में राष्ट्रीय गौरव की अनुभूति की कमी पर हम शोक कैसे कर सकते हैं जबकि हमने अतीत की अपनी अद्‌भुत वैज्ञानिक उपलब्धियों से उन्हें सुपरिचित ही नहीं कराया है?'' विशुद्ध वैज्ञानिक ज्ञान केवल वास्तविकता पर आधारित होता है और उसे केवल अतीत की सच्ची घटनाओं का वर्णन करने वाली पुस्तकों अथवा पांडुलिपियों से प्राप्त किया जा सकता है; पौराणिक कथानकों एवं गल्प-साहित्य से नहीं। अतः आइ-सर्व के वैज्ञानिकों के दल ने वैज्ञानिक आधार पर प्राचीन घटनाओं के सुपुष्ट ऐतिहासिक प्रमाण एकत्रित करने का संकल्प किया। इस दल में संस्कृत के विद्वान, खगोलशास्त्री, पुरातत्त्वविद, मानव-विज्ञानी, भूगर्भ-शास्त्री एवं समुद्रशास्त्र के विद्वान थे और अन्य विषयों के विद्वान भी थे जिन्होंने तीन वर्षों से कुछ अधिक समय में श्रमसाध्य शोध के निष्कर्षों को प्रथम प्रस्तुति के रूप में विद्वज्जनों एवं सुधीजनों के समक्ष ''साइंटिफिक डेटिंग ऑफ ऐन्शियेंट इवेंट्स बिफोर 2000 बी.सी.'' अर्थात '2000 वर्ष ई.पू. से पहले की प्राचीन घटनाओं का वैज्ञानिक तिथि निर्धारण' के रूप में प्रस्तुत करने का निश्चय किया। एतदर्थ दो दिवसयीय एक राष्ट्रीय सेमिनार भारतीय जनसंचार संस्थान, नई दिल्ली में 30 एवं 31 जुलाई 2011 को आयोजित किया गया।

5. विशुद्ध रूप से वैज्ञानिक एवं विभिन्न विषयों को समाहित करने वाले शोध-निबन्धों से सेमिनार में प्रथम दृष्ट्या यह बात उभरी कि हिम-युग के पश्चात का वैश्विक सभ्यताओं का इतिहास, विशेषकर भारतीय उप-महाद्वीप का, जो स्कूल एवं कालेजों में पढ़ाया जा रहा है, वह वस्तुतः उससे भी कहीं अधिक पुराना है। यह तर्क कि मध्य एशिया से भारत में 1500 वर्ष ई.पू. में आये आर्य आक्रमणकारियों द्वारा इस देश को सभ्य बनाया गया, केवल भाषाई अनुमानों पर आधारित है और उसका कोई वैज्ञानिक आधार नहीं है। अधिकांश शोधनिबन्धों ने यह सिद्ध किया कि दस हजार वर्षों से भी अधिक समय से इस क्षेत्र में अपनी एक सभ्यता एवं संस्कृति फल-फूल रही थी। चूंकि ये महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष न तो स्कूल/कालेज की पुस्तकों में और सामान्यतया न ही इलेक्ट्रानिक अथवा मुद्रित संचार माध्यमों में स्थान पाते हैं, वस्तुत 99% भारतवासी लगभग इतने ही प्रतिशत वास्तविक खोजों से अनभिज्ञ रह जाते हैं। सुधीजन ज्यों-ज्यों प्रस्तुत सामग्री से परिचित होते जायेंगे, कदाचित उन्हें अपने विद्यार्थी-काल में ज्ञात ऐसी बातों को आत्मसात करने में दिक्कत होगी जो अब नूतन वैज्ञानिक गवेषणाओं से प्रमाणित नहीं होती हैं। उनका खोजी मस्तिष्क ढेरों सवालों के उत्तर मांगेगा जिनमें से कुछ के भी उत्तर यदि प्रामाणिक और संतोषपूर्ण रूप से इस सेमिनार में मिल पाये तो यह हमारे उद्देश्य की पूर्ति में महत्वपूर्ण कदम होगाः

(*i*) प्लैनेटेरियम सॉफ़्टवेयर से प्राचीन संस्कृत ग्रंथों में वर्णित ग्रहीय विन्यासों की खगोलीय गणना दर्शाती है कि 7000 वर्ष ई.पू. से भी पूर्व से भारत देश में एक स्वतंत्र सभ्यता विद्यमान थी। ऋग्वेद में वर्णित सन्दर्भ 7000 वर्ष ई.पू. से 4000 ई.पू. के मध्य आकाशीय दृश्यों का स्पष्ट चित्रण करते हैं और वाल्मीकि रामायण में वर्णित दृश्य क्रमिक रूप से उन घटनाओं का वर्णन करते हैं जो लगभग 5100 वर्ष ई.पू. घटित हुई थीं। **क्या ये तिथियाँ वास्तविक हैं और क्या यह सचमुच क्रमिक हैं?**

(*ii*) प्राचीन पुस्तकों में पारिस्थितिकी के सन्दर्भ, विशेष रूप से वे जो हिमनदों के पिघलने और प्राचीन नदियों में बहने वाले जल की मात्रा में बदलाव दर्शाते हैं, खगोलीय तिथियों को सुपुष्ट करते हुए प्रतीत होते हैं। सुदूर संवेदन तकनीक से इसरो (ISRO) द्वारा लिए गए चित्र जिनसे प्राप्त परिणाम सेडीमेंटोलाजी और ड्रिलिंग के आंकड़ों से समर्थित हैं, बताते हैं कि हिमाचल प्रदेश, पंजाब, हरियाणा और राजस्थान से होकर एक विशाल नदी हिमालय से कच्छ के रन तक लगभग 6000 वर्ष ई.पू. में उसी प्रकार बहती थी जैसा कि वेदों और पुराने महाकाव्यों में वर्णित है। **इस नदी को सरस्वती नहीं तो और क्या कहेंगे?**

(*iii*) पुरा-जलवायु में आधुनिक शोध से पता चलता है कि पिछले हिमयुग के पश्चात और नूतन युग के आरम्भ में हिमनद स्वाभाविक रूप से पहले भूमध्य रेखा के समीप जैसे कि श्रीलंका और दक्षिण भारत के आस-पास पिघले होंगे और इन स्थानों पर बहने वाली नदियों के तट पर ही सभ्यता का विकास आरम्भ हुआ होगा। जब जनसंख्या काफी बढ़ी तो पानी की कमी के कारण उत्साही अन्वेषक दक्षिण से उत्तर की ओर गए होंगे। उत्तर की ओर यह प्रवासन कई शताब्दियों तक चला होगा और अंत में जब ये लोग हिमालय से निकली नदियों के तट पर पहुंचे तो उन्हें दीर्घ काल तक सभ्यता के विकास हेतु समुचित जलवायु मिली जहाँ पर प्रचुर मात्रा में पानी था, भोजन था और आश्रय था। हजारों वर्षों के बाद जब ये नदियाँ सूखने लगीं या उनमें पानी का निरन्तर प्रवाह न रहा, इनमें से कुछ लोग मध्य-एशिया, पश्चिम-एशिया और यूरोप की ओर चले गए। पर्यावरणविदों के अनुसार पारिस्थितिकी का यह क्रम आवर्तनीय रहा है और हर हिम युग के बाद यह अपने को दुहारायेगा। **तो क्या कोई आर्य लोग सचमुच मध्य-एशिया से भारतवासियों को सभ्य बनाने आये या यह क्रम कहीं इसका उलट तो नहीं था?**

(*iv*) समुद्र-तल में उतार-चढ़ाव से सम्बन्धित समुद्र-शास्त्र से इस तटीय क्षेत्रों में पुरातात्विक स्थानों के बारे में विवरण प्राप्त होता है जो या तो पानी में डूबे हैं, या हाल ही में खोजे गए हैं या चारों ओर थल से घिरे हैं और ये करीब 7500 वर्ष पुराने हैं। इनमें से मुख्य हैं, हजीरा, धोलावीरा, जुनिकुरन, सुरकोटदा, प्रभास, पाटन और गुजरात में द्वारिका के समीप नियोलिथिक स्थान। **क्या ये रिपोर्टें खगोल से प्राप्त उन घटनाओं की तिथियों की पुष्टि नहीं करती हैं जो हमारे महाकाव्यों में इन स्थानों से सम्बंधित और वर्णित हैं?**

(*v*) पुरावानस्पतिक शोध से ज्ञात हुआ है कि वेदों और महाकाव्यों में वर्णित खेती से सम्बंधित कई पेड़, पौधे और जड़ी-बूटियां भारत में विगत आठ से दस हज़ार वर्षों से लगातार विद्यमान हैं। चूंकि इनका लगातार उपयोग होता रहा है, **क्या यह स्वीकार्य हो सकता है कि प्राचीन भारतीय सभ्यता का अचानक अंत हो गया जैसा कि कुछ लोग सामान्यतः मानते हैं?**

(*vi*) मानव-शास्त्र से सम्बंधित शोध प्रबंध से ज्ञात होता है कि पेलिओलिथिक निरंतरता से सम्बन्धित डीएनए तिथिकरण 60000 वर्ष ई.पू. से आरम्भ होती हैं। होलोसीन (नूतन युग) के समय के जीनोम से सम्बंधित शोध से ज्ञात होता है कि भारत के पूर्व से पश्चिम और उत्तर से दक्षिण में रहने वाले लोगों का जेनेटिक प्रोफाइल एक ही है और विगत

11000 वर्षों से इसमें बदलाव नहीं आया है और यह मध्य-एशिया या यूरोप के लोगों के प्रोफाइल से मेल नहीं खाता है। अतः प्रचलित मान्यता के विपरीत क्या द्रविड़ों, आदिवासियों और उत्तर भारतीयों के पूर्वज एक ही थे?

(*vii*) नवीनतम पुरातात्त्विक खोजों ने ऐसे अनेकानेक साक्ष्य प्रस्तुत किये हैं जिनसे भारतीय उप-महाद्वीप में विकसित एक सभ्यता का अस्तित्व प्रमाणित होता है और जो 7000 वर्ष ई.पू. से पुष्पित और पल्लवित होती रही है। इसके कतिपय उदाहरण हैं उत्तर-पूर्व में मेहरगढ़, कोट डिज़ी और नौशारो, पश्चिम में लोथल और धोलावीरा तथा पूर्व में लहुरादेवा, झूसी, टोकवा और हेतापत्ती। **क्या पुरातत्त्व भी खगोलीय, पारिस्थितिकी और मानव-शास्त्र से प्राप्त इस निष्कर्ष की पुष्टि करता है कि आर्य ही भारतवर्ष के मूल निवासी थे और पिछले 10000 से भी अधिक वर्षों से वे यहाँ पर एक स्वतंत्र सभ्यता की स्थापना और विकास में लगे हुए थे?**

6. महामहिम ए.पी.जे. अब्दुल कलाम हमारे शोधकर्त्ताओं के लिए प्रमुख प्रेरणा स्रोत रहे और इस प्रथम सेमिनार के उद्घाटन के लिए उनकी गरिमामय उपस्थिति ने हमारे उत्साह में आशातीत उत्साह का संचार किया और इस संकल्प को दृढ़ किया कि विशुद्ध वैज्ञानिक रीति से गवेषणा करते हुए भारतीय उपमहाद्वीप के प्राचीन इतिहास को हम पुनः लिखें जिससे हमारी अति प्राचीन एवं अति समृद्ध सांस्कृतिक विरासत के प्रति सभी वर्गों व समुदायों से सम्बन्धित भारतीयों में गर्व का संचार हो।

7. आइ-सर्व की दिल्ली शाखा की अध्यक्ष ने विभिन्न वैज्ञानिक विषयों को समाहित करने वाली उक्त कार्यप्रणाली को श्रीराम के युग की तिथियों के निर्धारण के लिए अपनाया। इसके परिणाम आश्चर्यजनक रहे या कदाचित अभूतपूर्व। प्राप्त संकलन में श्रीराम के जीवन से सम्बंधित घटनाओं की खगोलीय विधि से प्राप्त तिथियों का अन्य विषयों जैसे पुरातत्त्व, मानव-शास्त्र, पुरावनस्पति, भूगर्भीय, पारिस्थितिकी, समुद्र-विज्ञान और सुदूर संवेदन से साम्य परिलक्षित है।

8. अब विश्वभर में ईसाई धर्म में वर्णित विश्वास कि पृथ्वी 23 अक्तूबर, 4004 ई.पू. को बनी थी तथा इसके पूर्व की समस्त बातें गल्प की श्रेणी में हैं, इसके बारे में विचार बदल गए हैं। अब पर्यावरणविदों द्वारा नूतन-काल का समय पहले से ज्ञात समय से तीन हजार साल और अधिक प्राचीन अर्थात करीब 12000 वर्ष पूर्व स्थापित किया गया है। इस

प्रकार पिछले हिमयुग के बाद विश्वसभ्यता का विकास कम-से-कम 11000 वर्ष पूर्व से प्रारम्भ हुआ अवश्यंभावी लगता है। अतः केवल भारत का इतिहास ही नहीं, समूचे विश्व के इतिहास को कई वैज्ञानिक विषयों पर आधारित तथ्यों के अनुसार लिखे जाने की आवश्यकता है। परिणामस्वरूप केवल रामायण और महाभारत ही नहीं बल्कि इलियड और ओडिसी जैसे महाकाव्य भी गल्प की श्रेणी से निकलकर इतिहास कहलायेंगे। वर्तमान शोध परिकल्पना और पहला सेमिनार इसी नवीन सोच का शुभारम्भ है।

9. भविष्य में विश्व के विश्वविद्यालयों में इतिहास का अध्ययन समाज विज्ञान अथवा कला संकाय में न होकर विज्ञान संकाय में होगा। ठीक ही तो है कि इसे विभिन्न विषयों से सम्बंधित विज्ञान के रूप में देखा जाय। इतिहास को वैज्ञानिक रूप से पुनः लिखे जाने एवं विभिन्न शाखाओं के वैज्ञानिकों द्वारा इसे पढ़ाया जाना महत्त्वपूर्ण है और हमारा विचार है कि डॉक्टरेट की उपाधि किसी व्यक्ति विशेष के अलावा उस व्यक्ति-समूह को भी प्रदान की जानी चाहिए जो इन शाखाओं के विद्वानों के निर्देशन में शोध करें। हमें वेदों, उपनिषदों, महाकाव्यों, बौद्ध एवं जैन साहित्य में विशुद्ध वैज्ञानिक और यथार्थ रूप से यह देखना है कि इनमें क्या सच्ची ऐतिहासिक घटनाओं का वर्णन है और उनका क्या वैज्ञानिक महत्त्व है जिनकी खोज से हमारे जीवन की गुणवत्ता में सुधार आ सके क्योंकि वास्तव में मानव-समाज का अस्तित्व वस्तुतः प्राचीन घटनाओं की देन है और उसी में समाहित है तथा मानव-मात्र का भविष्य भी उसके विगत काल की सही समझ पर आधारित है।

यह पुस्तक हम सर्वशक्तिमान ईश्वर के चरणों में इस प्रार्थना के साथ अर्पित करते हैं कि वह विश्व के लोगों को प्रेरणा प्रदान करें ताकि वो विश्व इतिहास को, विशेषकर भारतीय उपमहाद्वीप के इतिहास को, पुनः वैज्ञानिक आधार पर लिखें। ऐसा करते हुए वे प्राचीन पुस्तकों में वर्णित घटनाओं का खगोलीय तिथि-निर्धारण करें जिनकी पुष्टि बहुआयामी-वैज्ञानिक अनुसंधान रिपोर्टों से भी होती हो।

नई दिल्ली

14 जनवरी, 2013 (मकर संक्रान्ति)

सरोज बाला

डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम, भारत के भूतपूर्व राष्ट्रपति द्वारा
दिनांक 30/07/2011 को दिया गया उद्‌घाटन वक्तव्य

प्राचीन काल का वर्तमान से मिलन - एक बेहतर भविष्य की रचना के लिए

एक मनुष्य का डीएनए उसके
इतिहास पर रचित सर्वोत्तम पुस्तक है।

नई दिल्ली में '2000 वर्ष ई.पू. से पहले प्राचीन भारतीय साहित्य में वर्णित घटनाओं का वैज्ञानिक तिथि निर्धारण' विषय पर आयोजित इस संगोष्ठी के उद्‌घाटन समारोह में भाग लेते हुए मुझे अत्यंत हर्ष का अनुभव हो रहा है। आप सब को मेरा हार्दिक अभिवादन। मुझे इस बात की प्रसन्नता है कि आप सभी प्राचीन भारत में विकसित कृषि, ऊर्जा, चिकित्सा, हथियार प्रणाली एवं धातु विज्ञान सम्बन्धित ज्ञान-विज्ञान एवं आधुनिक अविष्कारों के बीच तालमेल स्थापित करने में प्रयत्नशील हैं। मुझे विश्वास है कि इस प्रकार के अध्ययन के माध्यम से हम अपने पूर्वजों द्वारा विकसित तकनीकों का उपयोग करने में सक्षम हो पाएंगें जिससे हम वर्तमान एवं भविष्य दोनों के लिए पर्यावरण को प्रकृति के अनुकूल बना सकते हैं। आज मैं **''प्राचीन काल का वर्तमान से मिलन - एक बेहतर भविष्य की रचना के लिए''** विषय पर अपने विचार आप सबके साथ बाँटना चाहूँगा।

दोस्तों, जब आप महाकाव्यों, विशेषकर रामायण के वैज्ञानिक काल निर्धारण पर कार्य कर रहे हैं, तो मैं आप के साथ अपने कुछ व्यक्तिगत अनुभव बाँटना चाहूँगा। मेरा जन्म रामेश्वरम् में ब्रिटिश कालीन भारत में हुआ था, जहाँ मैं 16 वर्ष की आयु तक पला-बढ़ा। रामेश्वरम् द्वीप के हर भाग से मैं विस्तार से परिचित हूँ क्योंकि जब मैं छोटा था तभी से पूरे रामेश्वरम् में मैं रोज़ाना घर-घर समाचार पत्र बाँटनें जाया करता था। मेरी आखों में गंधमान पर्वत बसा है, जहाँ से माना जाता है कि श्रीराम ने श्रीलंका देखी थी। मेरे समक्ष आता है रामेश्वरम् का प्रसिद्ध कोदण्ड राम मंदिर। रामेश्वरम् के विभिन्न भागों में स्थित रामतीर्थम्,

लक्ष्मणतीर्थम्, जटायुतीर्थम् एवं अग्नितीर्थम् मुझे साफ दिखते हैं। मध्य में है रामनाथ स्वामी मंदिर जहाँ पर स्थित शिव लिंग की श्रीराम ने पूजा की थी। आज आडि (आदि) मास की अमावस्या है एवं देश के विभिन्न भागों से कम से कम 3 लाख तीर्थ यात्री आज रामेश्वरम् में समुद्र में स्नान के लिए एकत्रित होंगे। ऐसा माना जाता है कि युद्ध से लौटकर, रावण वध के दोष निवारण के आशय से श्रीराम ने इसी दिन रामेश्वरम् के समुद्र में स्नान किया था। प्रत्येक दिन हजारों तीर्थ यात्री रामेश्वरम् के सौंदर्य एवं आध्यात्मिकता का आनन्द लेने के लिए यहाँ आते हैं। इस बात से सबसे अधिक प्रसन्नता मुझे होगी यदि हम वैज्ञानिक आयामों के माध्यम से उन स्थानों की पहचान कर सकें जहाँ श्रीराम, लक्ष्मण, हनुमान सुग्रीव एवं वानर सेना ने श्रीलंका पर आक्रमण के लिए आधार स्थल बनाए थे। वास्तव में मुझे वैज्ञानिक रूप से रामायण के काल का निर्धारण किए जाने में अत्यधिक रुचि है।

तिथि निर्धारण से पौराणिक कथाओं का इतिहास में परिवर्तन

वैदिक एवं उत्तर-वैदिक साहित्य में वैज्ञानिक ज्ञान का प्रचुर भंडार है जो कि मानवता के लिए अत्यंत उपयोगी हो सकता है। इस साहित्य में विश्वास पैदा करने के लिए यह आवश्यक है कि इन ग्रंथों की रचना का सटीक काल ज्ञात किया जाए जिससे इनको इतिहास की घटनाओं में परिवर्तित किया जा सके न कि केवल कपोल कल्पित साहित्य मान कर छोड़ दिया जाय। मुझे प्रसन्नता है कि यहाँ उपस्थित खगोल शास्त्र, पारिस्थितिकीशास्त्र, धर्मविज्ञान, पुरातत्व, मानवशास्त्र एवं अंतरिक्ष विज्ञान के शोधकर्त्ताओं ने ऐसा ही प्रयत्न किया है जो कि आधुनिक वैज्ञानिक समाज को प्रदर्शित किया जा रहा है।

रामायण के वैज्ञानिक काल निर्धारण के अध्ययन से हम पाते हैं कि वाल्मीकि जी ने रामायण की रचना करते समय उसमें बहुत से प्रमाण सम्मिलित किए। एक तरफ उन्होंने उस समय पर आकाश में ग्रहों की स्थिति एवं बहुत से स्थलों का भौगोलिक चित्रण एवं ऋतुओं का वर्णन किया तो दूसरी ओर राजाओं की वंशावलियों के बारे में इतनी विस्तृत जानकारी दी है जिसका वैज्ञानिक विधि से प्रयोग करके उन घटनाओं का समय ज्ञात करना कोई टेढ़ी खीर नहीं है।

रामायण में दी गई वंशावली एवं आज की पुरातात्विक खोजें रामायण युग के काल निर्धारण के सुराग प्रदान करते हैं। लेखक बी. आर. हरण के अनुसार किसी भी अन्य देश या धर्म में वास्तविक इतिहास इतनी सावधानी और इतने प्रमाणों के साथ प्रलेखित नहीं है।

कोई भी प्राचीन इतिहास वास्तुकला और साहित्यिक साक्ष्यों के समर्थन पर आधारित होता है। संगम साहित्य तमिल राजाओं एवं रामायण और महाभारत श्रीराम और श्रीकृष्ण के अस्तित्व एवं शासन के बारे में दस्तावेजी प्रमाण हैं। पुरातत्व और साहित्यिक तरीकों का प्रयोग समय निर्धारण का केवल अनुमान प्रदान कर सकता है। रामायण के सटीक समय निर्धारण के लिए वैज्ञानिकगण खगोलिक साक्ष्य एवं गणनाओं का प्रयोग करते हैं। भारत के प्राचीन इतिहास की पुनर्रचना के लिए बहुत से अग्रणी खगोलविद एवं वैज्ञानिक आज एक साथ आए हैं।

आइए देखें, खगोलीय तिथि निर्धारण किस प्रकार किया जाता है। विशिष्ट इतिहासकार डॉ. पी. वी. वर्तक के शब्दों में ''ऋषि वाल्मीकि ने घटनाओं के काल का विवरण बहुत विस्तार से किया है यद्यपि यह सब नक्षत्रों एवं ग्रहों की आकाशीय स्थिति के माध्यम से किया गया है। खगोलीय विवरण की यह गुत्थी सुलझाना सरल कार्य नहीं है एवं न ही अधिक लोगों ने इसका प्रयास किया है। यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि प्राचीन भारतीयों के पास समय मापने एवं इसके उल्लेख का सटीक तरीका था। वे चन्द्रमा की नक्षत्रों में स्थिति के अनुसार 'तिथि' अर्थात दिन एवं मास की गणना करते थे और इसी प्रकार ऋतुओं एवं सोल्सटिसेज को दर्ज करते थे। खगोलीय पिण्डों की इन स्थितियों की किसी भी व्यवस्था को जो कई हज़ार सालों में एक बार हो सकती है, दर्ज करके ऐसी घटना का काल ज्ञात किया जा सकता है।''

डॉ. वर्तक ने महाकाव्य से सैंकड़ों ऐसे उदाहरण लिए हैं। वाल्मीकि के अनुसार श्रीराम का जन्म चैत्र शुक्ल नवमी तिथि एवं पुनर्वसु नक्षत्र में जब पाँच ग्रह अपने उच्च स्थान में थे, हुआ था। इस प्रकार सूर्य मेष राशि में 10° पर, मंगल मकर राशि में 28° पर ब्रहस्पति कर्क में 5° पर शुक्र मीन राशि में 27° पर एवं शनि तुला राशि में 20° पर थे (बाल काण्ड 18/श्लोक 8, 9)। डॉ. वर्तक ने श्रीराम के जन्म की तिथि 4 दिसम्बर 7323 ई.पू. निकाली है जबकि चार ग्रह अपने उच्च स्थान में थे। चार ग्रहों की स्थिति पर आधारित उपरोक्त गणना के अनुसार रामायण का समय वर्तमान से 9300 वर्ष पूर्व निकलता है।

ऋग्वेद में ऐसे विकसित सभ्य समाज का वर्णन है जो मुख्यतः शहरी था, समुद्र से सम्बन्ध रखता था, जिसमें नाना प्रकार के पानी के जहाज़ एवं 75 प्रकार के घर, झोपड़ी से लेकर महल तक, प्रयोग किए जाते थे। वैदिक साहित्य से ज्ञात होता है कि भारतीयों का गणित का ज्ञान बहुत विकसित था एवं खगोल विज्ञान में उनकी असाधारण दक्षता थी।

तक्षशिला विश्वविद्यालय 700 वर्ष ई.पू. स्थापित किया गया था जहाँ विश्व भर से 10,000 छात्र 60 से अधिक विषयों का अध्ययन करने आते थे। इसी प्रकार नालंदा विश्वविद्यालय तीसरी शताब्दी ई.पू. में अस्तित्व में था, जहाँ पर 90 लाख से अधिक पुस्तकें उपलब्ध थीं। आयुर्विज्ञान के क्षेत्र में, महर्षि अत्रेय आंतरिक चिकित्सा, श्री धनवंत्री शल्य चिकित्सा एवं कश्यप स्त्री एवं बाल रोग के सर्वप्रथम गुरु माने जाते हैं। सुश्रुत संहिता में 40 से अधिक शल्य यंत्रों का विवरण है एवं आयुर्वेद में समग्र उपचार पर चर्चा की गई है।

आधुनिक तारामंडल साफ्टवेयर का प्रयोग करके खगोलीय गणनाओं से साबित होता है कि वाल्मीकीय-रामायण में वर्णित खगोलिक घटनाऐं वास्तव में वर्तमान से 7000 वर्ष पूर्व उसी क्रम में घटी थीं जैसा कि रामायण में लिखा है। रामसेतु उसी स्थान पर समुद्र में डूबा हुआ पाया जाता है जहाँ रामायण में वर्णित है। जलमग्न द्वारका की खोज भी भारत सरकार के समुद्री पुरातत्व विभाग द्वारा की गयी है।

जलवायु परिवर्तन पर अंतर-सरकारी पैनल (NASA वैश्विक परिवर्तन मास्टर निर्देशिका) द्वारा दिए गए अनुमान के अनुसार पिछले 7000 वर्षो में समुद्र सतह का स्तर लगभग 2.8 मीटर अर्थात 9.3 फीट बढ़ा है। वर्तमान में रामसेतु के अवशेष समुद्र सतह से लगभग इसी गहराई (9-10 फीट नीचे) पर पाए गए है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि वर्तमान से 7000 वर्ष पूर्व इस सेतु का प्रयोग भूमि मार्ग के रूप में किया जाता था। हजारों वर्ष पूर्व मानव द्वारा निर्मित सेतु का यह अकेला उदाहरण है। यह आवश्यक है कि हमारे शोधकर्त्ता पृथ्वी-विज्ञान, भू-विज्ञान, अंतरिक्ष विज्ञान, सुदूर संवेदन, समुद्र विज्ञान एवं जलवायु परिवर्तन विज्ञान एवं समुद्र सतह के नीचे निर्माण करने वाले लोगों की एकीकृत टीम बना कर एक मिशन-उन्मुख कार्यक्रम का शुभारम्भ करें।

यहाँ मैं अनुरोध करूँगा कि हमारे शोधकर्ता भारत के प्रतिभाशाली इतिहासकारों, भू-वैज्ञानिकों, खगोलविदों एवं अंतरिक्ष वैज्ञानिकों को साथ लेकर महाकाव्यों पर कम से कम 100 पीएच.डी. के लिए एक शोध कार्यक्रम का आरंभ करें जिससे महाकाव्यों में घटनाओं के इतिहास की सच्चाई सुनिश्चित की जा सके। विज्ञान हमेशा किसी भी निष्कर्ष की पुष्टि के लिए कई स्रोतों से जानकारी हासिल करता है। यह सिद्धांत महाकाव्यों पर समस्त शोधकार्य के लिए भी पूर्णतया लागू होना चाहिए। अब मैं मानव विकास पर प्रोफेसर तोबायस के कार्य पर चर्चा करना चाहूँगा।

मानव विकास

मैं, पुरा-मानव विज्ञान एवं पुरातात्विक खोजों पर प्रोफेसर तोबायस के कार्य का अध्ययन कर रहा था और मैंने सोचा कि मानव विज्ञान पर शोधकार्य में प्रगति पर आपका ध्यान आकर्षित करूँ। परंपरागत रूप से मानव के विकास को समझने के लिए दो बिल्कुल अलग तरीके अपनाए जाते हैं। प्रथम है पुरातात्विक साक्ष्यों की खोज के माध्यम से। भारत में मोहन जो-दाड़ो एवं हड़प्पा एवं विश्वभर में इसी प्रकार के अन्य स्थलों पर हुई खोज से ऐसे प्रबल प्रमाण हासिल हुए हैं जिससे हमें बहुत सी पुरातन सभ्यताओं की जीवन शैली, संस्कृति एवं उनके मूल के बारे में स्पष्ट जानकारी प्राप्त हुई है। प्रोफेसर तोबायस ने इस विषय-क्षेत्र को अत्यंत विशिष्ट रूप से प्रभावित किया है, खासकर कि जमीन से मिली जानकारी पर जो कि हमेशा से मानव विकास का पालना रही है। दूसरा नया तरीका आधारित है मानव जीनोम की हमारी बढ़ती हुई समझ पर। मानव जीनोम का बहुत बड़ा हिस्सा सभी मनुष्यों में, यहाँ तक कि चूहों में भी एक समान हैं, फिर भी इसके सूक्ष्म भागों में पाई जाने वाली विविधता मानवों में विकसित विविधता का कारण है एवं इसको नियंत्रित करती है।

मुझे इस बात की प्रसन्नता है कि ऐसे जीनोम अध्ययन से हमें ज्ञात हुआ है कि हड़प्पा की सभ्यता किन्ही रहस्यमय मनुष्यों की नहीं थी जिनका जैविक मूल अज्ञात था अथवा जो मध्य एशिया के ऊँचे सांस्कृतिक केन्द्रों से आए हुए प्रवासी थे। उनकी पहचान इसी उप-महाद्वीप के पश्चिमोत्तर भाग में पनपी हड़प्पा सभ्यता से पूर्व की संस्कृतियों के वंशजों के रूप में हो चुकी है।

सिंधु घाटी एवं मेंसोपोटामिया के मध्य, संभवतः व्यापार मार्ग के माध्यम से मानव जीन के प्रवाह के कारण, इस पूर्व-पश्चिम धुरी पर मानव में मिलते जुलते नाक नक्श पाए जाते है जो उत्तर दक्षिण प्रायद्वीप धुरी में मिलने वाली नाक नक्श की असमानताओं की तुलना में अधिक समान प्रतीत होते हैं। परंतु इसको समझने के लिए प्रवासी सिद्धान्त को लागू करने की आवश्यकता नहीं है। मानव के विकास को समझने के लिए मानव जीनोम का प्रयोग एवं जेनेटिक इन्जीनियरिंग में शोधकार्य, वैज्ञानिकों के लिए अत्यंत आकर्षक हो गया है। महाकाव्यों की काल गणना करते समय भी उनमें उल्लेख की गई वंशावलियों को मानव जीनोम अनुक्रम एवं जीवाश्म (फॉसिल) के रूप में मिले साक्ष्यों के साथ मिला कर देखा जाना चाहिए।

प्रो. तोबायस आनुवंशिकी के क्षेत्र में अग्रणियों में से एक हैं। अनुवंशिकी एवं पुरा- मानव विज्ञान में विशाल अनुभव के आधार पर प्रो. तोबायस ने 60 करोड़ वर्षों के मानव उद्विकास की सम्पूर्ण प्रक्रिया को विश्व के सामने एक आसान कैपस्यूल के रूप में प्रस्तुत किया है। उनके इस जटिल शोधकार्य के परिणामों की सरलता ने मानव विकास की समझ से सम्बंधित चुनौतियों पर ध्यान देने के लिए विश्व भर से वैज्ञानिकों को प्रेरित किया है। आज विश्व भर में विभिन्न प्रौद्योगिकियों के अभिसरण पर चर्चा हो रही है। प्रो. तोबायस एवं अन्य वैज्ञानिकों ने दिखाया है कि मानव का मूल, समय एवं स्थान दोनों में एक ही बिन्दु पर अभिसरित होता है। प्रो. तोबायस द्वारा प्रस्तुत मानव विकास के मूल को भारतीय महाकाव्यों में वर्णित घटनाओं के साथ जोड़कर देखा जाना चाहिए। अन्ततोगत्वा प्रत्येक भारतीय महाकाव्य मानव के इतिहास, उसके संघर्ष एवं उसकी सभ्यता की कहानी है। अतएव इनका सम्बन्ध मानव के मूल एवं विकास के साथ स्थापित किया जाना चाहिए।

जीवन की उत्पत्ति

पुरा-मानवशास्त्र के द्वारा प्राचीन मानव इतिहास का खुलासा बेहद खूबसूरती के साथ हुआ है। जीवन की उत्पत्ति 60 करोड़ वर्ष पूर्व हुई एवं महाद्वीपों का सरकना (Continental Drift) 20 करोड़ वर्ष पूर्व आरम्भ हुआ जिससे 5 महाद्वीपों की उत्पत्ति हुई। स्तनधारी जीवों का विकास 14 करोड़ वर्ष पूर्व हुआ, मानव का प्रकार (होमिनिड) 2.6 करोड़ वर्ष पूर्व आया परन्तु आधुनिक मनुष्य 2 लाख वर्ष पूर्व ही विकसित हुआ। इसके बाद उसने उत्पत्ति के स्थान से बाहर निकलना आरम्भ किया एवं पिछले 50,000 वर्षों में समस्त विश्व में जाकर बस गया। बोलचाल की भाषा 10,000 वर्ष पूर्व विकसित हुई परन्तु लिखित भाषा का जन्म कुछ हज़ार वर्ष पूर्व ही हुआ। यह अभूतपूर्व प्रगति मानव की 200 से 400 पीढ़ियों (5,000 से 10,000 वर्षों) के दौरान हुई है।

प्रो. तोबायस के अनुसार बोलचाल की भाषा की उत्पत्ति का समय 10000 वर्ष पुराना है एवं चैत्रमास की शुक्ल नवमी को श्रीराम का जन्म 5114 ई.पू. अर्थात 7117 वर्ष पहले हुआ। हमें भाषा की उत्पत्ति एवं वाल्मीकीय-रामायण के उद्विकास के बीच क्या सम्बंध रहा, इसका अध्ययन करना होगा।

नवीन डी. एन. ए. प्रौद्योगिकी

नई डी. एन. ए. तकनीक के प्रयोग से हमें मनुष्य के इतिहास के बारे में बेहतर जानकारी प्राप्त हुई है। मनुष्य का डी. एन. ए उसके इतिहास पर रचित सर्वोत्तम पुस्तक है। आजकल

बुद्धिमत्ता, संज्ञान, औषधियों की प्रतिक्रिया, व्यवहार सम्बंधित समस्याऐं ये सभी जीन्स से सम्बंधित मानी जाती है। नई डी. एन. ए. तकनीक से रोगी जीन मैपिंग का विकास बहुत तेज़ गति से हो रहा है। संभवत: पिछले 30,000-50,000 वर्षों के सह-अस्तित्व के कारण नए अविष्कारों एवं संस्कृतियों को अपनाकर नए समाजों का उद्‌विकास हुआ है।

इस प्रकार इस जीनोम युग में भी प्रकृति-पोषण का सिद्धांत सही साबित होता है: हम अपने माता पिता से विरासत में जो पाते है वह आधार है, उसके ऊपर हम जो बनते-बनाते हैं वह एक सुन्दर इमारत जैसी है। चाहे वह आइन्सटीन जैसे वैज्ञानिक हों अथवा कोई और अद्वितीय रचना हो। हमारा माहौल हमारी नियति को आकार देने में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। मनुष्य क्या बनता है इस बात पर निर्भर करता है कि उसको कैसे अवसर प्राप्त हुए। पैदा होने के समय सब बच्चे महान विद्वान बनने के लिए समान रूप से अग्रसर होते है। इसके पश्चात व्यक्ति क्या बना इस पर निर्भर करता है कि उसके तंत्रिका तंत्र अथवा किसी भी अन्य तंत्र ने उसका कितना साथ दिया।

भारतीय उपमहाद्वीप में सभ्यता की उत्पत्ति

मुझे इस बात की प्रसन्नता है कि आधुनिक प्रौद्योगिकी के प्रयोग से भारतीय पुरातत्व विज्ञान का परिप्रेक्ष्य बदल गया है जिससे शोधकर्ताओं को भारतीय उपमहाद्वीप में सभ्यता के स्वदेशी मूल एवं विकास को साबित करने में सहायता मिली है। यह एक महत्वपूर्ण निष्कर्ष है जो पूरे देश के एकीकरण में सहायक है क्योंकि इसके अनुसार सभी भारतीयों के पूर्वज एक ही मूल के थे। यह चर्चा करते हुए मुझे अपने हृदय शल्य चिकित्सक मित्र के साथ वार्तालाप की याद आती है। वे कहते हैं "जब मैं पृथक-पृथक रोगियों के हृदय की शल्य चिकित्सा करता हूँ, उनके हृदय को खोलने के बाद पाता हूँ कि उन सब के रक्त का रंग एक जैसा है। इसलिए मैं उनमें भेदभाव नहीं कर सकता एवं उनकी देखभाल अलग-अलग तरीके से नहीं कर सकता ।" यह सोच प्रक्रिया सभी भारतीयों में वैज्ञानिक एवं सांस्कृतिक स्तर पर शामिल होनी चाहिए जिससे हमें यह अनुभूति हो कि राष्ट्र व्यक्ति से ऊपर है और हम सभी को राष्ट्र की तेज प्रगति एवं विकास में योगदान करना है। अब मैं प्राचीन घटनाक्रम के वैज्ञानिक काल निर्धारण से प्राप्त ज्ञान के प्रयोग के बारे में चर्चा करूँगा।

प्राचीन भारत में कृषि

काल निर्धारण अध्ययनों में पाया गया है कि वैदिक काल में किसान प्राकृतिक खाद का प्रयोग करते थे। वैदिक लोगों ने पाया कि मिट्टी 12 प्रकार की होती है। प्रत्येक प्रकार की मिट्टी के लिए उन्होंने उचित खाद का निर्धारण किया। उन्होंने कृषि में किसी प्रकार के विषैले कीटनाशक का प्रयोग नहीं किया। इसके परिणाम स्वरूप हमारा पर्यावरण बहुत कम प्रदूषित हुआ और मानवजाति को गुणवत्तापूर्ण खाद्यान्न उपलब्ध हुए। इस अनुभव से हमें बहुत कुछ सीखना चाहिए। अपनी प्राचीन सभ्यता से सीख लेते हुए अब हमें सुनिश्चित करना है कि हम पर्यावरण के अनुकूल उर्वरक, कीटनाशक एवं पेड़पौधों का प्रयोग अपने कृषि उत्पादन के विकास में करें जो कि 21 वीं सदी के 'हरित-कृषि' लक्ष्य की प्राप्ति में एक महत्वपूर्ण योगदान होगा। हमें अतीत की सभ्यता से विरासत में मिली कृषि प्रणाली एवं अन्य प्रणालियों को, जो हमें जीविका अर्जन की क्षमता प्रदान करती थीं, आज की आधुनिक प्रौद्योगिकी के साथ एकीकृत करने की आवश्यकता है। आधुनिक प्रौद्योगिकी, विरासत में मिले इस डेटा-बेस की मूल्य-वृद्धि (वैल्यु ऐडिशन) में अवश्य ही सहायक होगी।

महाकाव्यों के वैज्ञानिक काल निर्धारण मिशन पर मेरे सुझाव निम्नलिखित हैं

1. महाकाव्यों पर कम से कम 100 पीएच. डी. के साथ भारत के प्रतिभाशाली इतिहासकार, भू-वैज्ञानिक, खगोलविद् एवं अंतरिक्ष वैज्ञानिक शोधकार्य आरम्भ करें जिसमें महाकाव्यों के इतिहास एवं उनमें वर्णित घटनाओं का काल निर्धारण सत्यता के साथ किया जा सके।

2. महाकाव्यों के काल निर्धारण को इनमें वर्णित वंशावलियों, मानव जीनोम एवं उन प्रमाणों के साथ जोड़कर देखा जाना चाहिए जो हमें जीवाश्म (फॉसिल) के रूप में प्राप्त होते हैं।

3. प्रो. तोबायस द्वारा मानव के मूल एवं विकास पर की गई खोजों को भारतीय महाकाव्यों से जोड़कर देखा जाना चाहिए। भारतीय महाकाव्य मानव के इतिहास, उसके संघर्ष एवं उसकी सभ्यता की कहानी है। अतएव इनका सम्बंध वैज्ञानिक रूप से सिद्ध हो चुके 60 करोड़ वर्ष पुराने मनुष्य के उद्‌विकास के साथ स्थापित किया जाना आवश्यक है।

4. प्रो. तोबायस के अनुसार बोलचाल की भाषा 10,000 वर्ष पुरानी है एवं श्रीराम जन्म की तिथि चैत्र शुक्ल नवमी, 10 जनवरी 5114 ई.पू. अर्थात 7117 वर्ष पुरानी है। अतः

आवश्यक है कि बोलचाल की भाषा के जन्म एवं वाल्मीकीय-रामायण के उद्विकास के मध्य सम्बंध स्थापित किया जाय।

निष्कर्ष

मैनें ऐसे कुछ क्षेत्रों पर चर्चा की है जो महाकाव्यों के काल निर्धारण अध्ययन से लाभान्वित हो सकते हैं। मुझे विश्वास है कि यहाँ एकत्रित वैज्ञानिक एवं प्रौद्योगिकविद् ऐसे बहुत ज्ञान-क्षेत्रों का विवरण देंगे जिनमें वैज्ञानिक काल निर्धारण लाभदायक सिद्ध हो सकता है। ऐसे अध्ययन के निष्कर्षों को अधिकतम लोगों तक पहुँचाने के लिए यह आवश्यक है कि इन निष्कर्षों, एवं इनमें से प्रत्येक के उपयोग की संभावना का गहनता से प्रलेखन किया जाय। मेरा सुझाव है कि यहाँ एकत्रित टीमें उन कार्य क्षेत्रों की सूची बनाऐं जो हमारे युवाओं की शिक्षा प्रक्रिया का हिस्सा बन सके। ऐसा करने से यह संगोष्ठी प्राथमिक एवं माध्यमिक स्कूली पाठ्यपुस्तकों में हमारी प्राचीन सभ्यता के महत्वपूर्ण अंगों पर जानकारी शामिल किए जाने के बारे में विशिष्ट सिफारिशें दे सकेगी। इसके अलावा संगोष्ठी के माध्यम से प्रयास होना चाहिए कि विविध विशिष्टताओं के विद्वानों जैसे कि कृषि, चिकित्सा, इंजीनियरिंग, पुरातत्व विज्ञान, भूविज्ञान एवं पर्यावरण और उनके विचारों को एक ताने-बाने का भाग बनाऐं जिससे कि प्राचीन सभ्यताओं द्वारा छोड़े गए सबक और उनकी जीवन-शैली की जानकारी हमारी सोच में परिवर्तन ला सके और हम पर्यावरण के अनुकूल मानव पर्यावास के विकास की ओर अग्रसर हो पाऐं।

इन शब्दों के साथ मैं "2000 वर्ष ई. पूर्व से प्राचीन भारतीय साहित्य में वर्णित घटनाओं का वैज्ञानिक तिथि निर्धारण" विषय पर इस संगोष्ठी का उद्घाटन करता हूँ। एक बेहतर भविष्य के लिए विगत को वर्तमान से जोड़ने के मिशन में सफलता के लिए सभी प्रतिभागियों को मेरी शुभकामनाऐं।

ईश्वर की आप पर कृपा हो।

डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम

(अनुवादक: श्री अशोक भटनागर)

'2000 वर्ष ई.पू. से पहले की प्राचीन घटनाओं का वैज्ञानिक तिथि निर्धारण' विषय पर राष्ट्रीय संगोष्ठी

संगोष्ठी की पृष्ठभूमि, विषय-वस्तु एवं कार्यवाही का सारांश

वेदों पर वैज्ञानिक शोध संस्थान (आइ-सर्व) की स्थापना 21 जून, 2004 को हुई थी तथा इसके मुख्य संरक्षक माननीय श्री आर वैंकटरमन (भारत के पूर्व राष्ट्रपति) थे। श्री के. वी. कृष्णमूर्ति इसके अध्यक्ष व मुख्य न्यासी हैं। आइ-सर्व, भारत सरकार के वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसन्धान विभाग द्वारा वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसन्धान संगठन के रुप में मान्यता प्राप्त और आयकर अधिनियम की धारा 35(i) (ii) के अधीन अधिसूचित है। इस संस्थान के मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

(*i*) वेदों, उपनिषदों, महाकाव्यों आदि में निहित वैज्ञानिक गूढ़ रहस्यों, सिद्धांतों व तकनीकों की खोज।

(*ii*) प्राचीन वैज्ञानिक परिज्ञान को आधुनिक विज्ञान के साथ जोड़ना ताकि कृषि, ऊर्जा, धातु तथा दवा आदि के क्षेत्रों में प्रदूषण मुक्त तथा प्रकृति-अनुकूल प्रौद्योगिकियों को विकसित किया जा सके।

(*iii*) प्राचीन पुस्तकों व पाण्डुलिपियों में वर्णित घटनाओं का वैज्ञानिक संसाधनों के माध्यम से तिथि निर्धारण ताकि सभी भारतीय अपनी महान विरासत में सामूहिक राष्ट्रीय गर्व का अनुभव कर सकें।

2. तीसरे उद्देश्य की परिपूर्ति के लिए आइ-सर्व दिल्ली शाखा ने 'ऋग्वेद से आर्यभटीयम् तक वर्णित घटनाओं का वैज्ञानिक ढंग से तिथि निर्धारण' अनुसंधान परियोजना पर कार्य प्रारंभ किया जिसके दो मुख्य भाग थे–

- प्लैनेटेरियम सॉफ्टवेअर के उपयोग से प्राचीन संस्कृत पुस्तकों व पांडुलिपियों में ग्रहों तथा नक्षत्रों के संदर्भों का खगोलीय समय निर्धारण

- इन क्रमिक तिथियों का पुरातत्त्व, भूविज्ञान, मानवविज्ञान, समुद्र विज्ञान, भौगोलिक अनुसंधान व उपग्रह चित्रों से परस्पर सम्बन्ध।

3. **इस अनुसंधान परियोजना की परिकल्पना श्रीमती सरोजबाला ने की थी तथा वे इस विषय पर पिछले 5-6 वर्षों से शोध कर रही थीं।** भारत सरकार के मानव संसाधन विकास मंत्रालय के अधीन राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान ने सितंबर 2010 में इस अनुसंधान परियोजना को मंजूरी दी तथा आइ-सर्व को आंशिक अनुदान की स्वीकृति भी प्रदान की। शोधकर्त्ता इस विश्वास के साथ खोज करने लगे कि वास्तविक ऐतिहासिक घटनाएँ तो वही हैं जो पिछले हजारों वर्षों में घटित हुई होंगी परंतु उनके बारे में हमारी जानकारी अत्यंत सीमित हैं क्योंकि उनके प्रमाण भूमि के नीचे तथा समुद्र की गहराईयों में छिपे हैं। इन प्रमाणों की खोज के लिए नए वैज्ञानिक संसाधनों व आविष्कारों का इस्तेमाल किया गया। ये सबूत भूमि तथा समुद्र के नीचे दबे होने के साथ-साथ ऐसे भी हैं जो किसी घटना के समय आकाश में ग्रहों व नक्षत्रों के विवरण के रूप में प्राचीन साहित्य में वर्णित हैं और प्लैनेटेरियम साफ्टवेयर के माध्यम से उनका तिथि निर्धारण संभव है।

4. विषय बहुत विशाल था और शोध अत्यन्त गहन तथा पूर्णत: वैज्ञानिक! संस्कृत के विद्वानों, खगोलविदों, पुरातत्त्वविदों, मानव-विज्ञानियों, भू-वैज्ञानिकों और अन्य सम्बद्ध विषयों के विशेषज्ञों के शोध-कर्त्ताओं ने दो से अधिक वर्षों के शोध के बाद, पहले भाग के बारे में अपने निष्कर्षों को वैज्ञानिकों, मूल शोधकर्त्ताओं और सामान्य जन के सामने रखने का फैसला विशेषरूप से इसलिये किया क्योंकि हमारे शोध के परिणाम अभी तक विश्वसनीय और ठोस थे। इस प्रथम भाग में 2000 ई.पू. से पहले की घटनाओं के वैज्ञानिक काल-निर्धारण पर शोध किया गया था। इस विषय पर दो दिन की राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन 30 और 31 जुलाई 2011 को भारतीय जनसंचार संस्थान, अरुणा आसफ अली मार्ग, नया जे.एन.यू. परिसर, नई दिल्ली में किया गया।

5. इस राष्ट्रीय संगोष्ठी के माध्यम से आइ-सर्व यह भी प्रदर्शित करना चाहता था कि भारत के स्कूलों व कालेजों में पढ़ाया जा रहा प्राचीन इतिहास आमतौर पर भाषायी अनुमानों व धार्मिक मान्यताओं पर आधारित है जिसकी पुष्टि बहुआयामी वैज्ञानिक अनुसंधान रिपोर्टों के आधारपर लगभग असंभव है। इन दोनों के बीच के अंतर को कम करना अत्यावश्यक है। वैज्ञानिक प्रमाणों तथा अनुसंधान निष्कर्षों के आधार पर लिखा गया इतिहास ही सभी वर्गों व धर्मों के लोगों को स्वीकार्य हो सकता है और वही इतिहास सभी भारतीयों के हृदयों में अपनी बहुमूल्य प्राचीन धरोहर में गर्व का संचार कर सकता है।

6. इस संगोष्ठी के आयोजन में, भारत सरकार के पृथ्वी विज्ञान मंत्रालय ने भी योगदान किया। संस्कृत विद्वानों, खगोलविदों, पुरातत्त्वविदों, मानवविज्ञानियों, इतिहासकारों, भू-वैज्ञानिकों, पारिस्थितिकी वैज्ञानिकों, समुद्र विज्ञानियों, अंतरिक्ष वैज्ञानिकों, नौकरशाहों, पेशेवरों, प्रोफेसरों, शिक्षाविदों और विभिन्न विश्वविद्यालयों के छात्रों तथा जनसाधारण ने बढ़-चढ़ कर भाग लिया। देशभर से बड़ी संख्या में शोधकर्त्ता भी इसमें शामिल हुए। संगोष्ठी में लेख प्रस्तुत करने वाले बहुत से वैज्ञानिक अपने विषय के जाने-माने शोधकर्त्ता थे। देश के कोने-कोने से आए वैज्ञानिकों तथा विशेषज्ञों ने विचार-विमर्श में भाग लेकर संगोष्ठी के स्तर को बहुत ऊँचा उठा दिया।

7. भारत के पूर्व राष्ट्रपति महामहिम डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम ने मुख्य अतिथि के रूप में अपनी गरिमामय उपस्थिति से इस अवसर की शोभा बढ़ायी और 30 जुलाई को उद्घाटन भाषण दिया। उनका यह भाषण www.abdulkalam.com पर भी उपलब्ध है। एन.सी.डी.आर.सी. के अध्यक्ष, न्यायमूर्ति श्री अशोक भान और संस्कृति मंत्रालय के सचिव श्री जे. सरकार, माननीय अतिथि थे। आइ-सर्व के अध्यक्ष श्री के.वी. कृष्णमूर्ति ने स्वागत भाषण दिया। उन्होंने कहा कि भारतवर्ष का इतिहास पाश्चात्य दृष्टिकोण व पूर्व की पौराणिक कल्पनाओं के बीच में फँसकर बहुत विकृत हो चुका है। आइ-सर्व दिल्ली शाखा द्वारा की गई इस नई पहल के चलते शुद्ध वैज्ञानिक ढंग से प्राचीन घटनाओं का क्रमिक निर्धारण संभव हो पाएगा। परम आदरणीय श्री कलाम जी का स्वागत करते हुए उन्होंने कहा कि रामेश्वरम के मछुआरे का यह होनहार पुत्र अपनी समझ, सूझबूझ तथा कठिन परिश्रम के आधार पर वर्ष, 2002 में भारत के राष्ट्रपति पद पर आसीन हुआ तथा आजतक सभी भारतवासियों के दिलों का बादशाह बना हुआ है।

8. शोध परियोजना संयोजक, श्रीमती सरोज बाला ने संगोष्ठी व शोध विषय का संक्षिप्त परिचय दिया। उन्होंने स्पष्ट रूप से बताया कि खगोलीय, पुरातात्त्विक, मानववैज्ञानिक और पारिस्थितिकी में किये गये शोध की रिपोर्टों से पता चलता है कि 'मध्य एशिया से आर्यों का भारत में अतिक्रमण' केवल एक कल्पना है जिसका कोई वैज्ञानिक आधार नहीं है। उनका कहना था कि यह सिद्धांत पूरी तरह से भाषागत अनुमानों व सुनी-सुनायी बातों पर आधारित था। वास्तव में भारतीय सभ्यता पिछले दस हजार से अधिक वर्षों से लगातार स्वदेश में ही विकसित होती रही है। उन्होंने कहा कि कई वर्षों की वैज्ञानिक खोजबीन के बाद आइ-सर्व इस निष्कर्ष पर पहुँचा है कि भारत का वास्तविक इतिहास अबतक मान्य तिथियों से कहीं

अधिक पुराना है। साक्ष्य के अभाव में अभी तक जिन घटनाओं को पौराणिक कल्पनाएँ माना जाता रहा है, वर्तमान में उपलब्ध वैज्ञानिक संसाधनों एवं तकनीकों के उपयोग से किए गए अनुसंधान के फलस्वरूप वही वास्तविक व ऐतिहासिक सिद्ध होती चली जा रही है।

9. महामहिम डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम ने प्राचीन घटनाओं के काल निर्धारण के वैज्ञानिक तरीकों का समर्थन किया और जोर दिया कि सेमिनार के दौरान उभरकर आयी जानकारी और ज्ञान का स्कूलों तथा कॉलेजों के छात्रों में प्रसार करने के लिए एक व्यवस्था बनायी जानी चाहिए, ताकि वे अपनी समृद्ध और सबसे प्राचीन विरासत पर गर्व कर सकें। उनके भाषण ने आइ-सर्व के शोध कर्त्ताओं का मनोबल बढ़ाया। उन्होंने कई महत्त्वपूर्ण सुझाव दिए इनमें कुछ इस प्रकार हैं :

- भारत के महाकाव्यों में वर्णित घटनाओं की तिथियों और इतिहास की सच्चाइयों का पता लगाने के लिए इतिहास, भू-विज्ञान, खगोलशास्त्र और अंतरिक्ष विज्ञान आदि के क्षेत्रों में काम करने वाले कम से कम सौ प्रतिभाशाली लोग इन विषयों पर शोधकर पीएच.डी. करें।
- वैज्ञानिक काल निर्धारण के लिए हमारे महाकाव्यों में वर्णित वंशावलियों को मानव जीनोमअनुक्रमणक अध्ययनों के साथ भी जोड़ा जाये।
- प्रोफेसर तोबायस द्वारा वर्णित मानव उत्पत्ति के क्रमिक विकास को भारतीय महाकाव्यों की घटनाओं से जोड़ा जाना चाहिये, क्योंकि अंततः हर भारतीय महाकाव्य का सम्बन्ध मानव के इतिहास, उसके संघर्ष और उसकी सभ्यता से है।
- प्रो. तोबायस के अनुसार बोली जाने वाली भाषा लगभग दस हजार वर्ष पुरानी है। जन्म के समय ग्रहों के विन्यास के आधार पर श्रीराम का जन्म 7125 वर्ष पूर्व (10 जनवरी 5114 ई.पू. को) हुआ था। बोली जाने वाली भाषा और वाल्मीकि रामायण के क्रमिक विकास के बीच हमें सम्बन्ध स्थापित करने की जरूरत है।

10. इस कार्यक्रम का मुख्य आकर्षण सेमिनार का स्मृति चिन्ह जारी किया जाना था। यह स्मृति चिन्ह एक दीवार पर लगाये जाने वाली घड़ी के रूप में था जिसमें 10 जनवरी 5114 ई.पू. को दिन के 12 बजकर 25 मिनट पर आकाश के दृश्य का चित्रण था। उस दिन चैत्र माह की शुक्ल पक्ष की नवमी थी जब श्री राम का जन्म हुआ था। आकाश का यह दृश्य वास्तव में वाल्मीकि रामायण (1/18/89) में वर्णित ग्रहों की स्थिति से बिल्कुल मिलता है।

यह चिन्ह, मूल अनुसंधानकर्त्ता स्वर्गीय पुष्कर भटनागर की स्मृति को अर्पित किया गया। इसे पुष्कर भटनागर जी के पूरे परिवार की उपस्थिति में महामहिम डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम जी ने जारी किया।

11. पहले वक्ता, पूर्व अपर महानिदेशक (आई.एम.डी.) श्री अशोक भटनागर ने 'ऋग्वेद और महाकाव्य में वर्णित ग्रहों व नक्षत्रों के सन्दर्भों का तारामण्डल सॉफ्टवेयर के माध्यम से खगोलीय काल निर्धारण' पर प्रस्तुति की। उन्होंने स्पष्ट किया कि तारामण्डल सॉफ्टवेयर की मदद से प्राचीन पुस्तकों में ग्रहों के संदर्भों की खगोलीय तिथियों का निर्धारण किया जा सकता है। वैदिक काल में खगोल विज्ञान निश्चय ही अति-उन्नत था और प्राचीन ग्रन्थों में वर्णित घटनाओं की तारीखों का निर्धारण वास्तव में ऐसे आधुनिक सॉफ्टवेयर की मदद से किया जा सकता है।

(i) उन्होंने आगे बताया कि ऋग्वेद में कई खगोलीय प्रसंग 7000 ई.पू. से 4000 ई.पू. तक की तिथियों के आकाशीय दृश्य से संबधित हैं और रामायण में उल्लिखित खगोलीय प्रसंग, 5100 ई.पू. के आसपास की तिथियों पर क्रमिक रूप से देखे जाने वाले दृश्यों के बारे में हैं। उन्होंने तारामण्डल सॉफ्टवेयर पर सजीव प्रस्तुति दी और दर्शाया कि वाल्मीकि रामायण में वर्णित ग्रहों व नक्षत्रों की स्थितियाँ सॉफ्टवेयर द्वारा प्रस्तुत आकाश के क्रमिक दृश्यों से हूबहू मिलती हैं।

(ii) श्री अशोक भटनागर ने ऋग्वेद से लिए गए कई मंत्रों का संबंध 7000 ई.पू. और 6000 ई.पू. में शरद् अयनांत (विन्टर सॉल्सटिस) के स्थान को प्रदर्शित करने वाले आकाश दृश्य से बताया। उन्होंने सॉफ्टवेयर के माध्यम से प्रकट किये गये आकाश के दृश्य को दिखाया जिसमें दर्शाया गया था कि अगस्त्य ऋषि के नाम से ज्ञात अगस्त्य नक्षत्र विंध्य से सर्वप्रथम 5100 ई.पू. के आसपास ही दिखायी दिया था। इससे रामायण और ऋग्वेद में वर्णित अगस्त्य ऋषि के सन्दर्भों का सहसम्बन्ध स्थापित होता है और इस दन्तकथा की पुष्टि होती है।

(iii) उन्होंने बताया कि वाल्मीकि ने बालकाण्ड के 18वें सर्ग के 8वें और 9वें श्लोक (1/18/8, 9) में भगवान राम के जन्म दिवस पर नक्षत्रों और ग्रहों की स्थिति का वर्णन किया है जिसके अनुसार (क) सूर्य मेष में (ख) शनि तुला में (ग) बृहस्पति एवं चन्द्रमा कर्क में (घ) शुक्र मीन में (च) मंगल मकर राशि में (छ) चैत्र माह व शुक्ल पक्ष (ज) चन्द्रमा पुनर्वसु के निकट अयोध्या से देखे गये। ये सभी विन्यास केवल एक और एक

तिथि-10 जनवरी 5114 ई.पू. के आकाश दृश्य से हूबहू मेल खातें हैं। यह चैत्र महीने की शुक्ल पक्ष की नवमी भी थी। इसी दिन हम रामनवमी मनाते हैं। पिछले हजारों वर्षों के दौरान किसी और दिन ऐसा ग्रह-विन्यास नहीं देखा गया।

(*iv*) पुत्र कामेष्टि यज्ञ के आरम्भ (15 जनवरी 5115 ई.पू.) से लंका की यात्रा की शुरुआत (19 सितम्बर, 5076 ई.पू.) तक कई अन्य तिथियों पर आकाश का दृश्य, रामायण में किये गये वर्णन से बिल्कुल मिलता है। अयोध्या काण्ड (2/4/18) में वर्णित आकाश का दृश्य 5 जनवरी, 5089 ई.पू. को देखा गया। उस समय भगवान राम 25 वर्ष के थे और उन्हें अयोध्या छोड़कर वन गमन के लिये प्रस्थान करना था। खर-दूषण के साथ युद्ध के दौरान (3/23/1-3) वर्णित सूर्य ग्रहण 7 अक्टूबर, 5077 ई.पू. को नासिक से देखा जा सकता था।

(*v*) इस प्रस्तुति में विशुद्ध वैज्ञानिक तरीके से सिद्ध किया गया कि वेदों और महाकाव्यों में वर्णित बहुत सी घटनायें वास्तविक हैं और ये दर्शाती हैं कि भारतीय सभ्यता, पिछले दस हजार वर्षों से लगातार विकसित होती रही है। प्लैनेटेरियम सॉफ्टवेयर के माध्यम से इनकी तिथियों का पूरी तरह वैज्ञानिक तरीके से पता लगाना सम्भव है।

12. भारतीय पुरातत्त्व परिषद, नई दिल्ली में रिसर्च एसोसिएट श्री कुलभूषण मिश्र ने पिछले आठ हजार वर्षों के दौरान, ''भारतीय उपमहाद्वीप में सभ्यता की उत्पत्ति और विकास: पुरातात्त्विक परिप्रेक्ष्य'' पर अपने विचार रखे। उन्होंने बताया कि भारतीय उपमहाद्वीप में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद की गयी पुरातात्विक छानबीन ने उत्तर-पश्चिम से लेकर, उत्तर में कश्मीर, पूर्व में गंगा के मैदानी इलाकों तथा सरस्वती दृशद्वती नदियों द्वारा सिंचित विशाल मैदानी क्षेत्रों में विकसित होती हुयी सभ्यता के अनेकों प्रमाण मिलते हैं।

(*i*) 1921-22 में सभ्यता की उत्पत्ति के रहस्यों से पहला पर्दा उठने के बाद से ही अनेक विद्वानों द्वारा इस सम्बन्ध में विभिन्न सिद्धान्तों को पेश किया गया है। पिछले लगभग तीस-चालीस वर्षों के दौरान नयी रीतियों और नूतन प्रौद्योगिकी की मदद से भारतीय पुरातत्व की अवधारणा में काफी बदलाव आया है। हाल के इन शोधों के परिणामस्वरूप हमें भारतीय उपमहाद्वीप में सभ्यता के स्वदेशी मूल को साबित करने के लिए अत्यधिक विश्वसनीय रूप से नई सामग्री का भण्डार मिला है। विदेशी मूल का होने के सिद्धांत अब गौण हो गये हैं और पुरातात्विक प्रमाणों के रूप में स्वदेशी मूल के सिद्धान्त को पर्याप्त समर्थन मिल रहा है।

(*ii*) उन्होंने विस्तार से बताया कि नवीन पुरातात्त्विक खोजों से बहुत सी ऐसी सामग्री मिली है जिससे 7000 ई.पू. से भारतीय उपमहाद्वीप में ही भारत की सभ्यता की उत्पत्ति और विकास के प्रमाण मिले हैं। इस सन्दर्भ में उन्होंने ऐसे कुछ उदाहरण भी दिये हैं, जैसे पूर्व में गंगा घाटी में लहुरादेवा, झूसी, टोकवा तथा हेटापट्टी, पश्चिमोत्तर में सिन्धु घाटी में मेहरगढ़, कोट डिज़ी तथा नौषेरो और पश्चिम में लोथल तथा धोलावीरा।

(*iii*) उन्होंने भारतीय उपमहाद्वीप के दो प्रमुख क्षेत्रों, पूर्वी और उत्तर-पश्चिमी, के बारे में विशेष जानकारी दी जिसमें सभ्यता के चरम तक पहुँचने के विभिन्न चरणों का ब्यौरा दिया। उत्तर-पश्चिम क्षेत्र के बारे में उन्होंने बताया कि 1956 में किले गुल मोहम्मद में पहली बार ग्रामीण जीवन की उत्पत्ति के ऐसे प्रमाण मिले थे जिनकी शुरुआत चार हजार वर्ष ई.पू. आँकी गयी। इसके बाद 1974 में मेहरगढ़ में खुदाई से पता चला कि उन्नत ग्रामीण जीवन विद्यमान होने के प्रमाण 7,000 वर्ष ई.पू. के हैं। खुदाई में लगातार सात आवासीय स्तरों के प्रमाण मिले हैं जिन के आधार पर भारतवर्ष में 7,000 वर्ष ई.पू. से 2000 वर्ष ई.पू. तक निरन्तर सभ्यता व संस्कृति के विकास के विस्मयकारी साक्ष्यों का खुलासा हुआ है। मेहरगढ़, दक्षिण एशिया के अग्रणी किसानों के सामाजिक जीवन, प्रौद्योगिकी, अर्थव्यवस्था तथा भौतिक संस्कृति के उत्कृष्ट प्रमाण के रूप में उभरा है।

(*iv*) भारत के इतिहास में महत्वपूर्ण स्थान रखने वाला मध्य गंगा का मैदान, उत्तर में हिमालय, दक्षिण में विंध्य, पश्चिम में गंगा-यमुना संगम और पूर्व में बिहार-बंगाल सीमा तक फैला है। इसमें आधुनिक पूर्वी उत्तरप्रदेश और बिहार के मैदानी इलाके शामिल हैं। पुरातात्विक दृष्टि से इस क्षेत्र में नवप्रस्तर/ताम्र पाषाणकालीन स्थलों, अवशेषों और काल अनुक्रम के बारे में पता चलता है। इस क्षेत्र में लहुरादेवा, झूसी, टोकवा और हेटापट्टी में खुदाई से छः व सात हजार ई.पू. में मध्य गंगा के मैदानों में इंसानों के प्रारम्भिक ग्रामीण सन्निवेष के बारे में महत्वपूर्ण सबूत मिले हैं। लहुरादेवा में चावल की खेती के बारे में भी शुरुआती प्रमाण मिले हैं।

(*v*) हड़प्पा सभ्यता पर बोलते हुए उन्होंने कहा कि यह सभ्यता मुख्य रूप से सरस्वती और सिन्धु घाटी के मैदानी इलाकों में फैली थी और पाकिस्तान तथा भारत में पंजाब, हरियाणा तथा पश्चिमी उत्तरप्रदेश में गंगा-यमुना दोआब, राजस्थान में थार मरुस्थल के उत्तरी तथा पश्चिमी भू-भाग और कच्छ तथा सौराष्ट्र सहित उत्तरी गुजरात के मैदानी इलाके इसमें शामिल थे। कई जगह विशेषकर हड़प्पा, मोहनजोदाड़ो, कोट डिज़ी, आमरी, कालीबंगन,

धोलावीरा और भिराना में खुदाई से पता चला है कि चौथी सहस्त्राब्दी ई.पू. तक बसी ग्रामीण बस्तियाँ, शहरी बस्तियों के रूप में विकसित होनी शुरू हो चुकी थीं और सभ्यता के विकास की यह कहानी इसके बाद भी जारी रही।

(*vi*) इस सभ्यता की प्रमुख विशेषतायें यह थीं कि वहाँ योजनानुसार शहरों में अभिजात (उच्च) वर्ग के लिए दुर्ग व आम लोगों के लिए छोटे घरों का निर्माण किया गया था, साथ ही सड़कें व गलियाँ सीधी दिशा में बनी थी। शहर आकर्षक प्रवेश द्वारों के साथ दुर्ग द्वारा घिरे हुए थे। लोथल में बन्दरगाह, मोहनजोदाड़ों में विशाल स्नानागार एवं अनाज भण्डार की व्यवस्था थी। घरों में विस्तृत जल निकासी की प्रणाली में सार्वजनिक व निजी नालियाँ शामिल हैं तथा नगर निगम के सार्वजनिक क्षेत्रों पर सफाई के अभाव व अतिक्रमण से बचाव को सुनिश्चित करने के लिये कानून लागू था। भवनों एवं अन्य निर्माणों में पकी ईंटों एवं धूप में सूखी ईंटों का प्रयोग होता था तथा चाक पर निर्मित मिट्टी के बर्तन जिन्हें प्राकृतिक एवं ज्यामितीय चित्रों से सजाया गया है। अन्य वस्तुओं में मानव एवं जानवरों की धातु और प्रस्तर की मूर्तियाँ, नापतौल की वस्तुयें, मिलती है। सोने, चाँदी, ताँबा, हाथी दाँत, सीप, अर्द्ध कीमती पत्थर तथा स्टीयेटाइट आदि के आभूषण प्राप्त होते हैं।

(*vii*) अतः खुदाई में मिले इन प्रमाणों से सिद्ध होता है कि सिन्धु-सरस्वती-गंगा नदियों के समूचे क्षेत्र में सातवीं से छठी सहस्त्राब्दी ई.पू. से निरन्तर सभ्यता व संस्कृति का विकास होता रहा। आम धारणा के विपरीत भारतीय उपमहाद्वीप में सभ्यता की जड़ें बहुत प्राचीन व गहरी हैं, जो 8000 वर्ष ई.पू. पहले से अस्तित्व में हैं और तीसरी सहस्त्राब्दी ई.पू. में भी फल फूल रही थीं।

(*viii*) अपनी प्रस्तुति का समापन करते हुए उन्होंने डी.एन.ए. और मानव जीव विज्ञान से महत्वपूर्ण प्रमाण प्रस्तुत करके, वैदिक आर्यों के मध्य एशिया से आगमन की मान्यता को नकारा। उन्होंने स्पष्ट किया कि बी.ई. हैम्फिल और उनके साथियों ने भारत के विभिन्न प्राचीन स्थलों से बड़ी संख्या में मानव कंकालों पर गहन शोध के बाद निष्कर्ष निकाला कि यह बिल्कुल स्पष्ट है कि 4500 वर्ष ई.पू. और 800 वर्ष ई.पू. के बीच किसी भी विदेशी का देशान्तरण नहीं हुआ, इसलिए पुरातत्व विज्ञान भी इस निष्कर्ष का समर्थन कर रहा है कि आर्य मूल रूप से भारत के थे और वे पिछले दस हजार वर्षों से लगातार भारत में सभ्यता का विकास व पोषण करते रहे हैं।

13. बीरबल साहनी पुरावनस्पति संस्थान लखनऊ में रेडियोकार्बन काल निर्धारण प्रयोगशाला के प्रभारी वैज्ञानिक, डॉ. सी. एम. नौटियाल ने भारत में प्राचीन संस्कृतियों के रिकार्ड के

रेडियोमीट्रिक काल-निर्धारण पर अपने विचार रखे। उन्होंने सैद्धांतिक मुद्दों, मतों और रेडियोमीट्रिक काल-निर्धारण तकनीकों के बारे में विस्तार से चर्चा करते हुये बताया कि किसी भी सभ्यता के उद्‌भव और विकास को समझने में समय सबसे महत्त्वपूर्ण मापदण्ड है। 1950 के दशक में डब्ल्यू. एफ. लिबी द्वारा रेडियोकार्बन काल निर्धारण विधि का विकास एक महत्त्वपूर्ण खोज थी। इससे पुरातत्त्वविदों द्वारा जिन स्थलों की खुदाई की गई, उनका काल निर्धारण वैज्ञानिक तरीके से करने में मदद मिली। उन्होंने स्पष्ट किया कि पिछले 60 वर्षों के दौरान रेडियोकार्बन काल निर्धारण के तरीकों में भी कई बदलाव आये हैं। इन नई पद्धतियों में थर्मोल्यूमिनिसैंस (टी.एल.), ऑप्टिकली स्टिमुलेटेड ल्यूमिनिसैंस (ओ.एस.एल.) और एक्सैलेरेटर मास स्पैक्ट्रोमेट्री (ए.एम.एस.) शामिल हैं। इन पद्धतियों का इस्तेमाल कर भौतिक अनुसंधान प्रयोगशाला, अहमदाबाद और बीरबल साहनी पुरावनस्पति संस्थान, लखनऊ जैसी कई भारतीय प्रयोगशालाओं ने हजारों पुरातात्त्विक नमूनों का वैज्ञानिक ढंग से काल-निर्धारण किया। भारत में पिछले आठ हजार से भी अधिक वर्षों के दौरान सभ्यता के उद्‌भव और विकास को समझने में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका रही। उन्होंने कुछ बहुत दिलचस्प उदाहरण भी प्रस्तुत किये :

- भारत में शरीफा, अब से 3500 वर्ष (1500 ई.पू.) पूर्व पाया जाता था। इससे सिद्ध होता है कि यह फल, भारत में पुर्तगालियों के आगमन से काफी पहले पाया जाता था।
- गुजरात क्षेत्र में धान की खेती शुरू होने का समय जो आमतौर पर माना जाता है वह वास्तव में उससे काफी पहले शुरू हो गया था।
- मध्य गंगा के मैदानी इलाकों में झूसी और लहुरादेवा से चावल के नमूनों से इसकी खेती का काल लगभग 7000/6000 ई.पू. होने का पता चलता है।

डॉ. नौटियाल ने आगे बताया कि हाल में ऐसे बहुत से उदाहरण सामने आये जिनसे पता चला है कि रेडियोकार्बन की तिथियाँ प्रचलित पुरातात्त्विक मान्यताओं के मुकाबले काफी पुरानी हैं, इसीलिए और स्थलों से नमूनें लेने तथा उनके काल का अनुमान लगाने के प्रयास तेज़ करने की जरूरत है। ऐसा करने में परम्परागत और आधुनिक दोनों पद्धतियों का इस्तेमाल किया जाना चाहिये। अपनी प्रस्तुति का समापन करते हुए उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि भारत में सभ्यता के रिकार्डों के बारे में अब तक जो मान्यता रही है वे वस्तुतः उससे कहीं अधिक पुराने हैं। यह बहुत जरूरी है कि और नमूनों का काल निर्धारण किया जाये तथा कुछ और स्थलों से जानकारी हासिल की जाये तथा टी. एल., ओ. एस. एल.,

तथा ए. एम. एस. जैसी आधुनिक पद्धतियाँ अपनाई जाये ताकि इन नमूनों का सही काल निर्धारण किया जा सके। डॉ. नौटियाल द्वारा दी गई जानकारी से श्री कुलभूषण मिश्र द्वारा निकाले गए निष्कर्षों की वैज्ञानिक रूप से पुष्टि भी हुई।

14. प्राचीन भारत में पुरातात्विक स्थलों से वन्य पेड़-पौधों के अवशेषों की पुरावनस्पति शास्त्रीय और प्राचीन परिस्थितिकीय जांच-पड़ताल पर पीएच.डी. और बीरबल साहनी पुरावनस्पति संस्थान की प्राचीन वानस्पतिक इकाई की प्रमुख डॉ. चंचला श्रीवास्तव ने भारतीय उपमहाद्वीप में प्राचीन सभ्यता के पुरातात्विक प्रमाण' विषय पर अपने विचार रखे। उन्होंने उन पुरातात्विक शोध रिपोर्टों के बारे में विस्तार से बताया जिनसे यह खुलासा हुआ है कि वेदों और महाकाव्यों में उल्लिखित कुछ पेड़-पौधे और जड़ी बूटियाँ भारत में लगातार आठ-दस हजार वर्षों से अधिक समय तक निरन्तर पाये/उगाये जाते रहे हैं।

(*i*) उन्होंने बताया कि गेहूँ और जौ की खेती 7000 वर्ष ई.पू. से पहले मेहरगढ़ में किये जाने का पता चला है। इस चरण में-इन्कॉर्न गेहूँ, एम्मर गेहूँ, हार्ड गेहूँ, दो बालियों वाला जौं, छिलके वाला तथा बिना छिलके वाला छह बालियों वाला जौं और खजूर की खेती का पता चला है। बाद के चरण (5500-5000 ई.पू.) में पहले की किस्मों के साथ-साथ क्लब गेहूं और ड्वार्फ गेहूं की अत्यधिक गुणकारी किस्मों के पाये जाने से कृषि में और विकास का पता चलता है। इससे भारतीय उपमहाद्वीप में फसल उगाने की स्वदेशी प्रक्रिया के विकास की बात उजागर होती है। दिलचस्प बात यह है कि कश्मीर घाटी में स्थित गुफकराल तथा बुर्जाहोम में नवपाषाण काल के प्रथम चरणों से बौना गेहूँ, क्लब गेहूँ, जौ, मसूर और मटर की खेती किए जाने के प्रमाण मिले हैं। कश्मीर घाटी में कनिष्कपुर में चौथी सहस्त्राब्दी ई. पूर्व में खजूर, बादाम और अंगूर उगाए जाने के भी प्रमाण मिले हैं।

(*ii*) हाल में मध्य गंगा के मैदानी इलाकों में लहुरादेवा में 7वीं सहस्त्राब्दी ई.पू. में चावल की खेती के साक्ष्य मिले हैं। गंगा के मैदानी इलाकों और विन्ध्य क्षेत्र में तीसरी से दूसरी सहस्त्राब्दी ई.पू. से लगातार जौं, गेहूँ, मसूर, मटर, घास और रागी बाजरा, ज्वार बाजरा तथा इतालवी बाजरा की खेती किए जाने के भी सबूत मिले हैं।

(*iii*) हड़प्पा सभ्यता पर किये गये सिलसिलेवार शोध से स्वदेशी मूल की 29 किस्म की फसलों की खेती के बारे में पुख्ता सबूत के तौर पर अपार सामग्री मिली है। अँगूर, सेम की हरी फली, मेहंदी, पारिजात या हारसिंगार, चमेली, करौंदा, नींबू और अनार की बागवानी की उन्नत पद्धतियों के बारे में दस्तावेजी सबूतों से हड़प्पा सभ्यता की कृषि सम्बंधी जानकारी

हासिल होती है। बहुत प्राचीन औषधियों में पोस्त के बीजों के इस्तेमाल की जानकारी मिलने से, अफीम और पोस्त के इस्तेमाल का अनुमान लगाया जा सकता है।

(*iv*) हड़प्पा सभ्यता के प्राथमिक स्तर पर 2800–2500 ई.पू. हरियाणा में हिसार जिले के बनावली में हर्बल शैम्पू के कार्बनीकृत नमूनों के पुख्ता प्रमाण मिले हैं। आज भी भारत में बालों को शैम्पू करने के लिए इस्तेमाल किया जाने वाले रीठा, आँवला और शिकाकाई के मिश्रण का उपयोग इस बात का सबूत है कि भारतीय सभ्यता लगातार विकसित होती रही है। इससे यह भी पता चलता है कि भारतीय समाज 5000 वर्ष पहले भी स्वास्थ्य विज्ञान पर पूरा ध्यान देता था।

(*v*) इस प्रकार आधुनिक रेडियोमीट्रिक काल निर्धारण तकनीक के प्रयोग से भारतीय उपमहाद्वीप के विभिन्न भागों में 7000 ई.पू. से चावल, गेहूँ और जौ की खेती के सबूत मिले हैं। 4000 ई.पू. से खरबूजे के बीज, नींबू की पत्तियों, अनार, नारियल तथा खजूर की बागवानी किए जाने के प्रमाण मिले हैं। 3000 ई.पू. से मटर आदि और 2800 ई.पू. से, शैम्पू बनाने में रीठा, आंवला और शिकाकाई के इस्तेमाल के सबूत मिले हैं। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि ये पेड़-पौधे हजारों वर्षों से निरन्तर उपयोग किए जाते रहे हैं। यह इस बात का सूचक है कि आमतौर पर स्कूलों और कॉलेजों में दी जाने वाली शिक्षा के विपरीत, भारत की प्राचीन सभ्यता का अनायास अन्त नहीं हुआ था, बल्कि वह पिछले दस हजार वर्षों से भारतीय उपमहाद्वीप में लगातार फलती-फूलती रही है।

15. डॉ. जे.आर. शर्मा, जो नेशनल रिमोट सेंसिंग सेन्टर, इसरो, हैदराबाद में ग्रुप डाइरेक्टर, इसरो-जोधपुर में क्षेत्रीय रिमोट सेंसिंग सेन्टर के महाप्रबंधक और वेब इनेबल्ड वाटर रिसोर्स इन्फॉर्मेशन सिस्टम ऑफ इंडिया परियोजना के निदेशक हैं, ने 31 जुलाई को ''उत्तर-पश्चिम भारत में प्राचीन नदियों और उनके नेटवर्क के साक्ष्य : रिमोट सेंसिंग पर आधारित तथ्य'' विषय पर अपनी प्रस्तुति दी।

उन्होंने बताया कि भारतीय उपमहाद्वीप के पश्चिमोत्तर क्षेत्र में हिमालय से अरबसागर तक बहने वाले विशाल नदी समूह के सूखे हुए प्राचीन जलमार्गों का जाल बिछा है। प्रमाणों के आधार पर सिद्ध होता है कि, 6000 वर्ष ई.पू. के आसपास वैदिक सरस्वती नाम से जाना जाने वाला एक सिन्धुनदी के समानान्तर, नदी समूह पूरी तेजस्विता पर था।

(*i*) उपग्रह से प्राप्त चित्रों के आधार पर उन्होंने बताया कि सरस्वती नदी हिमालय की ऊँचाई से निकलकर और सतलज, यमुना, चौतांग तथा दृशद्वती जैसी कई सहायक

नदियों के साथ सिंधु के मैदान के पश्चिमी भाग में बहती थी। सरस्वती नदी समूह, हिमाचल प्रदेश, पंजाब, हरियाणा तथा राजस्थान से गुजरते हुये अन्त में गुजरात में कच्छ के रन में समा जाता था। यह नदी, हिमालयी क्षेत्र में भूगर्भीय हलचल तथा पुरापर्यावरण बदलावों के कारण 2500-1500 ई.पू. के दौरान सूख गयी।

(*ii*) उन्होंने आगे बताया कि प्राचीन नदी समूह के चित्रण के लिए आप्टिकल सेटेलाइट डेटा, माइक्रोवेव डेटा और रिमोट सेंसिंग जैसे कई वैज्ञानिक तरीकों का इस्तेमाल किया गया है। भूविज्ञान, सेडिमेंटोलोजी, हाइड्रोज्योलोजी और ड्रिलिंग डेटा जैसी जानकारी से मानचित्रित मार्गों की पुष्टि की गयी है। उपग्रह चित्रों में विलुप्त नदी के स्पष्ट निशान मिलते हैं और इसके अवशेष अब भी उपरोक्त राज्यों में देखे जा सकते हैं।

(*iii*) डॉ. शर्मा ने विस्तार से बताया कि रिमोट सेंसिंग डेटा, प्राचीन भारतीय साहित्य में वर्णित सरस्वती के सन्दर्भों की पूरी तरह पुष्टि करते हैं। ऋग्वेद में इस नदी का वर्णन अम्बीतमे, नदीतमें, देवीतमें के रूप में किया गया है। इसका अर्थ है- माताओं में सर्वश्रेष्ठ, नदियों में सर्वश्रेष्ठ और देवियों में सर्वश्रेष्ठ। यह प्राचीन भारत के लोगों के लिये जीवनदायी महान नदी समूह था। उत्तरवर्त्ती वैदिक साहित्य में इसके विभिन्न चरणों का और वर्णन किया गया है। यजुर्वेद में यमुना को छोड़कर पाँच सहायक नदियों के साथ इसका वर्णन है। सरस्वती नदी के किनारों पर बारह सौ से अधिक प्राचीन पुरातात्विक स्थलों की खुदाई की गयी है।

(*iv*) डॉ. शर्मा ने अपनी प्रस्तुति का समापन करते हुए कहा कि उपग्रह चित्रों, पुरातात्त्विक खोजों, अन्य वैज्ञानिक प्रमाणों और प्राचीन साहित्यिक सन्दर्भों से, वैदिक सरस्वती और हिमालयी क्षेत्रों के बीच तीन प्रकार का सम्बन्ध स्थापित होता है :

(क) सतलुज नदी के साथ

(ख) बाटा/मारकंडा के जरिए यमुना के साथ और

(ग) दृशद्वती के जरिए यमुना के साथ। राजस्थान में सरस्वती के प्राचीन जलमार्गों में भू-जल की समय सीमा 16800 ई.पू. से 660 ई० तक की आँकी गयी है।

16. अगली प्रस्तुति गोवा के राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान (एन.आई.ओ.), में भू-वैज्ञानिक समुद्र विज्ञान विभाग की प्राचीन जलवायु परियोजना के अध्यक्ष और वरिष्ठ वैज्ञानिक डॉ. राजीव निगम की थी। उन्होंने पिछले 'पंद्रह हजार वर्षों के दौरान समुद्र की सतह में आये उतार-चढ़ाव और इसके किनारे बसी मानव बस्तियों पर इनके प्रभाव' पर प्रकाश डाला। उन्होंने विस्तार से बताया कि समुद्र में जलस्तर के उतार-चढ़ाव के बारे में समुद्र विज्ञान

की रिपोर्टों से 7500 ई.पू. और उसके बाद से जलमग्न हुए या तत्पश्चात् भूमि से घिरे कई तटवर्त्ती पुरातात्त्विक स्थलों के अस्तित्व का पता चलता है। इनमें शामिल हैं – हज़ीरा, धोलावीरा, जुनी कुरन, सुरकोट्डा, प्रभास पाटन और द्वारका इत्यादि। लोथल बन्दरगाह के बारे में विस्तार से चर्चा करते हुए उन्होंने यहाँ पर डॉकयार्ड होने के पक्ष में अनेक साक्ष्य पेश किये। उन्होंने बताया कि फोरामिनिफेरा केवल समुद्री जीव है तथा ये इस बन्दरगाह की सतह पर बड़ी संख्या में पाये गये हैं। इन सूक्ष्म जीवों को ताज़े पानी के स्रोतों में नहीं देखा जा सकता। इससे यह निष्कर्ष निकाला गया कि लोथल की यह संरचना ताज़े पानी की झील नहीं थी, बल्कि एक बन्दरगाह था, जो सम्भवतः दुनिया का सबसे पुराना समुद्री बन्दरगाह है।

(*i*) उन्होंने भारत के पश्चिमी तट के लिए समुद्री सतह के उतार चढ़ाव को प्रदर्शित करते हुए इनका ऐतिहासिक विवरण दिया। इससे यह पता चला कि 4500 वर्ष पूर्व (2500 ई.पू.) लोथल समुद्र के स्तर से ऊपर था लेकिन बाद में लगभग 1500 ई.पू. तक इसमें गिरावट आती गयी। अतः डॉ. एस. आर. राव द्वारा खोजी गयी जलमग्न द्वारका नगरी 1500 ई.पू. समुद्र तल से ऊपर थी। उन्होंने यह भी बताया कि महाभारत में वर्णित तथ्य से इसकी पुष्टि होती है कि श्री कृष्ण ने समुद्र से कुछ भूमि लेकर द्वारका नगरी बसायी थी क्योंकि 1400/1500 ई.पू. तक समुद्र का जल स्तर गिरते जाने के कारण, भूमि का यह भाग समुद्र से ऊपर हो गया था। डॉ. निगम ने आगे बताया कि इसके बाद समुद्र का स्तर लगातार बढ़ता गया।

(*ii*) डॉ. निगम ने पूर्वी तट पर समुद्र के उतार-चढ़ाव पर प्रकाश डालते हुए एक बहुत महत्वपूर्ण तथ्य का जिक्र किया और बताया कि समुद्र का स्तर 7000-7200 वर्ष पूर्व (5000-5200 ई.पू.) के आसपास मौजूदा स्तर से लगभग 3 मीटर नीचे था। वर्तमान में रामसेतु लगभग 3 मीटर ही नीचे पानी में डूबा है। इसका अर्थ हुआ कि 5000 ई.पू. में यह सेतु समुद्र की सतह से ऊपर था और इसका इस्तेमाल रामेश्वरम् तथा श्रीलंका के बीच भू-मार्ग के रूप में किया जा सकता था। इस प्रकार समुद्र के उतार-चढ़ाव पर किए गए इस अध्ययन से रामायण युग के खगोलीय काल-निर्धारण की पुष्टि हुई है।

(*iii*) उन्होंने सुझाव दिया कि समुद्र के उतार चढ़ाव पर आधारित पुरातात्त्विक प्रमाणों का विविध वैज्ञानिक अनुसंधानों से सहसंबंध प्राचीनतम घटनाओं की ऐतिहासिकता जानने में अत्यंत सहायक हो सकता है।

17. प्रो० वी. आर. राव (मानव विज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय) ने नूतन युग के

दौरान 'भारत के लोगों का आनुवंशिक प्रोफाइल : कुछ प्रसंग' विषय पर अपने विचार रखे। उन्होंने उन मानवशास्त्रीय शोधों के बारे में विस्तार से बताया, जिनसे यह प्रमाणित हुआ कि पुरापाषाण युग से डी.एन.ए. की निरन्तरता पिछले 60,000 वर्षों से चली आ रही है। उन्होंने बताया कि भारत में अगुणित एमटी. डी. एन. ए. और उच्च घनत्व डी.एन.ए. के अध्ययनों के संदर्भ में जीनोम प्रमाणों से निम्न तथ्य प्रकाश में आए हैं :

- डी. एन. ए. अध्ययन के आधार पर भारत में पुरापाषाण युग से अब तक रहने वाली जातियों, जनजातियों एवं अनुसूचित जातियों का किसी प्रकार का विभाजन जीव विज्ञान के आधार पर परिलक्षित नहीं होता।

- पूरे भारत में प्राचीन आनुवंशिक तत्व, भाषा की सीमाओं से परे हैं क्योंकि ये अब से 60-70 हजार वर्ष से भी काफी पहले के हैं।

- भारत में बाहर से आर्यों के अतिक्रमण के प्रमाण नहीं मिलते क्योंकि डी.एन.ए. वंशावलियों का स्वदेशी विकास हुआ है। यहाँ तक कि यूरेशियन वंशावलियों की जड़ें भी भारतीय वंश परम्परा में कुछ सीमा तक समाहित हैं जिससे यह संकेत मिलता है कि सम्भवतः भारत उपमहाद्वीप से लोग उस ओर गये।

डॉ. राव ने अपनी प्रस्तुति का समापन करते हुए कहा कि नूतन युग के दौरान जीनोम अध्ययन में पता चला है कि भारत के उत्तर, दक्षिण, पूर्व और पश्चिम में बसे मानवों के आनुवंशिक प्रोफाइल, एक जैसे हैं तथा वे पिछले 11000 वर्षों से एक जैसे हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि हड़प्पा सभ्यता के निवासी पश्चिमी/मध्य एशिया से प्रवासी या अज्ञात मूल के रहस्यमय लोग नहीं थे, बल्कि वे भारतीय उपमहाद्वीप के स्वदेशी लोग थे। इसलिए प्रचलित मान्यता के विपरीत, द्रविड़ों और उत्तर भारतीयों के पूर्वज एक ही थे। ये दोनों भारतीय मूल के हैं और इनका आनुवंशिक प्रोफाइल भी एक जैसा है इसलिये इनके पूर्वज भी एकसमान हैं।

18. भारत ज्ञान फाउण्डेशन के डॉ. डी. के. हरि ने "प्राचीन भारतीय इतिहास-वास्तविक है न कि काल्पनिक" विषय पर मल्टीमीडिया प्रस्तुति दी। उन्होंने कहा कि प्राचीन भारतीय इतिहास को चार मान्यताओं के आधार पर काल्पनिक कथायें कहा जाता था लेकिन आधुनिक वैज्ञानिक अनुसन्धान ने इन मान्यताओं को गलत सिद्ध कर दिया है:-

(*i*) भारत में मध्य एशिया से आर्यों का अतिक्रमण भाषायी आधार की कोरी कल्पना

है जिसकी वास्तविकता का एक भी वैज्ञानिक प्रमाण नहीं है। इसके विपरीत पिछले 10 हजार वर्षों के दौरान भारत में ही भारतीय सभ्यता के विकास के अनेकों वैज्ञानिक प्रमाण मिले हैं।

(*ii*) 327 ई.पू. में सिकन्दर द्वारा पोरस को हराने की कथा को ही इतिहास मानकर उसके पहले के समूचे इतिहास को काल्पनिक अथवा पौराणिक बताना फैशन मात्र था जिसका मूल अंग्रेजी लोगों का सुपीरिआरिटी कॉम्पलैक्स था।

(*iii*) कुछ विसंगतियों के कारण पुराणों की वंशावली को पौराणिक कथा के रूप में पेश किया गया हालांकि अन्य सभ्यताओं की ऐसी वंशावली में और भी अधिक विसंगतियाँ थी। नवीनतम वैज्ञानिक अनुसन्धान के प्रमाणों के अनुसार पिछले हिमयुग के पश्चात् वास्तव में पुराणों की वंशावलियों से सभ्यता का वास्तविक विकास परिलक्षित होता है।

(*iv*) 18वीं और 19वीं शताब्दी में ईसाइयों की मान्यता के अनुसार पृथ्वी की रचना 23 अक्टूबर 4004 ई.पू. में हुई थी, इसलिये इसे इससे काफी पहले बताने वाले भारत के इतिहास को पौराणिक कथा बताया गया था।

श्री हरि ने अपनी प्रस्तुति का समापन करते हुए कहा कि पुराण, वेद और महाकाव्य सभी काल्पनिक कथाओं की श्रेणी में डाल दिये जाते हैं, परिणामस्वरूप बिना साहित्य के इतिहास और इतिहास के बिना साहित्य की अनसुलझी गंभीर समस्या खड़ी हो गयी है। किसी भी राष्ट्र को अपने भविष्य के निर्माण के लिए अपने बीते समय से सामंजस्य स्थापित करना होगा, इसलिये अब समय आ गया है कि भारत, आर्यों के आक्रमण के मिथ्या विश्वास को छोड़कर, वैज्ञानिक प्रमाणों पर आधारित इतिहास की पुनर्रचना करें।

19. डॉ. बलदेवानंद सागर ने 'ऋग्वेद और महाकाव्यों में वर्णित स्थानों और नदियों के भौगोलिक साक्ष्यों पर अपने विचार रखे। उन्होंने वैदिक काल और उसके बाद के भौगोलिक क्षेत्रों के बारे में बताया। उन्होंने मानचित्र के माध्यम से बताया कि उत्तर-पश्चिमी भारतीय उपमहाद्वीप में खुदाई से जिन पुरातात्विक स्थलों का पता चला है, उनमें से अधिकतर का वैदिक साहित्य तथा वाल्मीकि रामायण में वर्णन किया गया है।

(*i*) उन्होंने, प्राचीन ग्रंथों से उदाहरण पेश करते हुए कई सहस्त्राब्दियों से सरस्वती नदी के अस्तित्व और महत्व पर प्रकाश डाला। उन्होंने पुरातात्त्विक रिपोर्टों और उपग्रह चित्रों के साथ इन संदर्भों के सम्बन्ध के बारे में बताते हुए इनकी वास्तविकता की पुष्टि की।

उन्होंने वेदों से अनेक मंत्रों का उच्चारण करने के साथ-साथ बताया कि ऋग्वेद-काल में सरस्वती नदी तीन स्रोतों से निकली हुई, सात सहयोगियों वाली, पर्वत से समुद्र तक बहने वाली महान नदी थी। परंतु यजुर्वेद की रचना के समय इसकी केवल पाँच सहायक नदियाँ थीं और उनमें यमुना शामिल नहीं थी।

(*ii*) उन्होंने बताया कि रामायण में वर्णित कई ऐसे भौगोलिक स्थल आज भी मौजूद हैं जहाँ उसी प्रकार की स्थितियाँ, चित्रण, पेड़-पौधे तथा जीव-जन्तु पाये गये हैं। डॉ. राम अवतार जी द्वारा किए गए श्रीराम वनगमन स्थलों के अनुसंधान के आधार पर श्री सागर ने बताया कि वाल्मीकि रामायण में वर्णित स्थलों में से अयोध्या से रामेश्वरम् तक भारत में 290 से अधिक स्थल ऐसे हैं जिनमें अभी भी ऐसे तालाब, नदियाँ, पर्वत, वन, जड़ी-बूटियाँ तथा ऋषि-आश्रम आदि हैं जिनका वर्णन रामायण में किया गया है। महाभारत युग के भौगोलिक साक्ष्यों का उल्लेख करते हुए उन्होंने समुद्र के भीतर डूबी हुई द्वारका नगरी का उदाहरण भी पेश किया।

20. श्री वाई. के. गैहा, आई.आर.एस., सदस्य, (बी.आई.एफ.आर.) ने इस प्रकार के शोध, तथा इस प्रकार के राष्ट्रीय सेमिनार के माध्यम से उभरकर आये कारोबारी अवसरों और जन-कल्याण के बारे में जानकारी दी।

(*i*) सेमिनार के दौरान पेश की गई प्रस्तुतियों से सिद्ध होता है कि उत्तर, दक्षिण, पूर्व तथा पश्चिम भारत में रहने वाले सभी भारतीयों का जैनेटिक प्रोफाइल एक है और उत्तर भारतीयों तथा द्रविड़ लोगों के पूर्वज एक ही थे। इसीलिये ये सभी भारतीयों को एकता के सूत्र में बाँधकर उनके आत्म सम्मान व राष्ट्रीय गर्व में वृद्धि करता है।

(*ii*) सरस्वती और दृशद्वती जैसी प्राचीन नदियों की सूखी धारा के नीचे भूमिगत जल के इस्तेमाल पर जोर देने से कुछ चुने हुए इलाकों में पानी की कमी की समस्या का समाधान किया जा सकता है।

(*iii*) सेमिनार में पर्यटन को बढ़ावा देने के लिये कई संभावनाओं की चर्चा की गयी, जैसे कि अगर जलमग्न द्वारका नगरी के स्थल पर एक संग्रहालय जो पारदर्शी ट्यूब के माध्यम से जुड़ा हो, स्थापित किया जाए तो इससे होने वाली आय से इसकी स्थापना के पहले वर्ष में ही इसकी लागत वसूल की जा सकती है और इससे भारत में पर्यटन को भी बढ़ावा मिलेगा।

21. आइ-सर्व के अध्यक्ष श्री के. वी. कृष्णमूर्ति ने समापन समारोह में स्वागत भाषण दिया। श्रीमती सरोज बाला ने सेमिनार में की गई प्रस्तुतियों का संक्षिप्त विवरण दिया। उन्होंने स्पष्ट किया कि अब तक हमें बताया जाता रहा है कि 1500 ई.पू. से पहले भारत असभ्य था और आर्य, लोगों ने मध्य एशिया से आकर असभ्य उत्तर भारतीयों को दक्षिण की ओर ढकेल दिया जिन्हें बाद में द्रविड़ कहा गया। इन हमलावरों ने उत्तर भारत में पहला सभ्य समाज स्थापित किया। वर्तमान में वैज्ञानिक संसाधनों तथा तकनीकों के क्रमबद्ध उपयोग से किये गये क्रमबद्ध वैज्ञानिक अनुसन्धानों से यह सिद्ध होता है कि यह केवल एक भाषागत अनुमान था और वास्तव में पिछले दस हजार वर्षों से विकसित होती हुयी भारतीय सभ्यता वेदों, तथा महाकाव्यों में वर्णित है और हमारा प्राचीन इतिहास कल्पना नहीं बल्कि वास्तविकता है। उन्होंने यह भी कहा कि इस सेमिनार में प्रस्तुत अनुसन्धान रिपोर्टों/शोध से अधिकांश भारतीय अनभिज्ञ हैं। इसलिए विचार-विमर्श के दौरान उठाये गये कई प्रश्नों के उत्तर विशेषज्ञों/वैज्ञानिकों ने इस प्रकार दिये:

(*i*) अब तक जिन खगोलीय तिथियों की गणना की गयी है उनसे भारत में भारतीय सभ्यता का विकास 7000 वर्ष ई.पू. से भी पहले होने के बारे में पता चलता है। ऋग्वेद में खगोलीय संदर्भ, 7000 वर्ष ई.पू. से 4000 वर्ष ई.पू. तक की तिथियों के आकाशीय दृश्यों और रामायण में वर्णित खगोलीय संदर्भ, 5100 वर्ष ई.पू. के आसपास की तिथियों को क्रमबद्ध रूप से देखे जाने वाले आकाश दृश्यों का प्रतिनिधित्व करते हैं। ये तिथियाँ अनन्य हैं और क्रमिक रूप से भी मिलती हैं।

(*ii*) प्राचीन ग्रन्थों में विशेषकर ग्लेशियरों के पिघलने और प्राचीन नदियों के जलस्तर में उतार-चढ़ाव के सम्बन्ध में पारिस्थितिकीय सन्दर्भों की पुष्टि ऐसी खगोलीय तिथियों से होती है। जलवायु सम्बन्धी बदलावों के बारे में हाल की रिपोर्टों से भी ऐसे ही निष्कर्ष सामने आये हैं।

(*iii*) उपग्रह चित्र व भूगर्भीय अनुसन्धान इस तथ्य की पुष्टि करते हैं कि वेदों और महाकाव्यों में वर्णित सरस्वती नदी समूह 6000 वर्ष ई.पू. के आसपास पूरे यौवन पर था। यह नदी धीरे-धीरे सूखती गयी और 2000 ई.पू. के आसपास लगभग विलुप्त हो गयी। तलछटी शास्त्र, जल भू-विज्ञान और ड्रिलिंग डाटा से भी इन निष्कर्षों की पुष्टि हुयी है।

(*iv*) समुद्र के स्तर में उतार-चढ़ाव पर समुद्र विज्ञान की रिपोर्टों से 7500 वर्ष ई.पू. से जलमग्न हुये या वर्तमान में भू-भाग से घिरे पाये गये कई तटीय पुरातात्विक स्थलों

के अस्तित्व का पता चलता है उदाहरणार्थ हज़ीरा, धोलावीरा, जुनी कुरन, सुरकोट्डा, प्रभास पाटन और द्वारका इत्यादि। इनमें द्वारका और प्रभास का शामिल होना काफी महत्त्वपूर्ण है।

(*v*) पुरावनस्पति-वैज्ञानिकों के अनुसार वेदों और महाकाव्यों में वर्णित बहुत से पौधों, पेड़ों और जड़ी-बूटियों की उपस्थिति पिछले 8000-10000 वर्षों से लगातार भारत में बनी हुई है। चूँकि इनका इस्तेमाल निरन्तर होता रहा है, यह सिद्ध होता है कि मान्यता के विपरीत प्राचीन भारतीय सभ्यता का अन्त नहीं हुआ था बल्कि वही सभ्यता वर्त्तमान में फलफूल रही है।

(*vi*) ताजा, पुरातात्विक खोजों से ऐसी काफी सामग्री मिली है जिससे यह प्रमाणित होता है कि भारतीय उपमहाद्वीप में भारतीय सभ्यता का उद्‌भव और विकास 7000 ई.पू. से हुआ था। इसके कुछ उदाहरण है- पूर्व में लहुरादेवा, झूसी, टोकवा तथा हेटापट्टी, पश्चिमोत्तर में मेहरगढ़ कोट डिजी तथा नौशारो और पश्चिम में लोथल तथा धोलावीरा। इस प्रकार पुरातात्त्विक प्रमाणों ने भी इन खगोलीय, पारिस्थितिकीय और मानव वैज्ञानिक निष्कर्षों की पुष्टि की है कि आर्य मूलरूप से भारतीय थे तथा वे पिछले दस हजार वर्षों से एक बहुत प्रगतिशील सभ्यता का उद्‌भव और पोषण करते चले आ रहे हैं और उन्हीं में से कुछ लोग मध्य एशिया तथा यूरोप की तरफ भी गये।

(*vii*) मानवशास्त्रीय शोधों से पता चला है कि भारत में डी.एन.ए. की निरन्तरता पिछले 60,000 वर्षों से चली आ रही है। नूतन युग के दौरान जीनोम के अध्ययन से यह स्पष्ट हुआ है कि भारत के उत्तर, दक्षिण, पूर्व और पश्चिम में बसे लोगों के आनुवंशिक प्रोफाइल एकसमान हैं और पिछले ग्यारह हजार से अधिक वर्षों से एकसमान रहे हैं। अतः प्रचलित मान्यता के विपरीत उत्तर भारतीय और द्रविड़ों के पूर्वज एक ही थे और वे दोनों मूलरूप से भारतीय थे।

श्रीमती सरोज बाला ने अपनी प्रस्तुति का समापन करते हुए कहा कि संगोष्ठी के प्रमुख निष्कर्षों से भारतीयों में उनकी प्राचीनतम समृद्ध सांस्कृतिक विरासत के प्रति गर्व पैदा करके उनमें एकजुटता और आत्म सम्मान की भावना पैदा की जा सकती है। वैज्ञानिक अनुसंधानों से यह भी प्रमाणित हुआ है कि भारतीय सभ्यता, पिछले दस हजार वर्षों से लगातार भारत में विकसित हो रही है और फल-फूल रही है और हमारे कुछ पूर्वज अन्यों को सभ्य बनाने के लिए यहाँ से बाहर गए थे।

22. माननीय न्यायमूर्त्ति अशोक भान, विदेश मंत्रालय में सचिव श्री मनबीर सिंह और केन्द्रीय प्रत्यक्ष कर बोर्ड की सदस्य श्रीमती पूनम किशोर सक्सेना ने सम्माननीय अतिथियों के रूप में उपस्थित होकर इस अवसर की शोभा बढ़ायी। उन्होंने अपने ज्ञान एवं उत्साह वर्धक सम्बोधन से सेमिनार का स्तर ऊँचा उठाया। उन्होंने इस बात पर ज़ोर दिया कि सेमिनार में प्रस्तुत इन बहुव्यवस्थित वैज्ञानिक अनुसंधान रिपोर्टों से प्रथम दृष्ट्या साबित होता है कि भारतीय सभ्यता पिछले दस हजार वर्षों से विकसित होती रही है और सभी भारतीयों का डी एन ए प्रोफाइल एकसमान है, इसलिए अब 'आर्यों के अतिक्रमण' की भाषागत अवधारणा को बदलने और विश्व के सामने गर्व से अपना मस्तक ऊँचा कर घोषणा करने का समय आ गया है कि भारत ही विश्व की प्राचीनतम् सभ्यता का सृजक व पोषक है।

23. संसदीय कार्य और जल संसाधन मंत्री श्री पवन कुमार बंसल ने 31 जुलाई 2011 को समापन भाषण दिया। उन्होंने कहा कि इस राष्ट्रीय सेमिनार में कई नए वैज्ञानिक शोधों और स्रोतों की जानकारी मिली है। प्रमाणों की छानबीन के जरिए घटनाओं के वैज्ञानिक काल-निर्धारण से भारतीय इतिहास की सीमाओं का विस्तार करने में इनसे मदद मिल सकती है। उन्होंने बताया कि ये केवल वही प्रमाण नहीं है जो समुद्र या भूमि के नीचे दबे पड़े हैं, बल्कि इनमें ऐसे साक्ष्य भी शामिल हैं जो नक्षत्रीय संदर्भों के रूप में मिलते हैं। यदि सभी उपलब्ध तकनीकों का प्रयोग कर विभिन्न स्रोतों की व्यवस्थित और समन्वित छानबीन की जाए तो ऐसी बहुत सी सामग्री उपलब्ध होगी जिससे साक्ष्यों के अभाव में पौराणिक कथाएँ कहलाए जाने वाले प्राचीन तथ्य वास्तव में ऐतिहासिक सिद्ध हो सकते हैं।

(*i*) उन्होंने इस सेमिनार के इस निष्कर्ष पर प्रसन्नता व्यक्त की कि चूँकि सभी भारतीयों के पूर्वज एक हैं, इसलिए प्राचीन घटनाओं के विशेषकर आनुवंशिक प्रोफाइलिंग से, वैज्ञानिक काल-निर्धारण की कोशिशों से उन्हें एकजुट किया जा सकता है। इससे औपनिवेशिक काल के दौरान, भाषायी अनुमानों के आधार पर लिखित हमारे इतिहास के कारण उत्तर भारतीयों और द्रविड़ों के बीच किए गए विभाजन को खत्म करने में मदद मिल सकती है।

(*ii*) उन्होंने इस बारे में किए गए वैज्ञानिक शोधों की भी सराहना की। उन्होंने सुझाव दिया कि इन्हें बढ़ावा दिया जाना चाहिये और इस ज्ञान का प्रसार स्कूलों तथा कालेजों में किया जाना चाहिये। सरस्वती जैसी नदियों के प्राचीन जलमार्गों के बारे में जानकारी से भूमिगत जल संसाधनों के दोहन में मदद मिल सकती है।

24. सेमिनार में पेश प्रस्तुतियों के आधार पर कुछ महत्त्वपूर्ण सुझाव सम्बन्धित सरकारी विभागों, विश्वविद्यालयों, स्वायत्तशासी एवं सांविधिक निकायों जैसे भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण, भारतीय भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण एवं भारतीय मानवविज्ञान सर्वेक्षण को दिये गये। संक्षिप्त रूप से इनमें से कुछ निम्नलिखित है: प्राचीन भारतीय इतिहास एवं विश्व के इतिहास की पुनर्रचना बहुआयामी वैज्ञानिक अनुसन्धानों के आधार पर की जानी चाहिये; भारतीय इतिहास अनुसन्धान परिषद का पुनर्गठन कर इसमें संस्कृत विद्वानों, खगोल शास्त्रियों, समुद्र विज्ञानियों, अन्तरिक्ष विज्ञानियों, पुरावनस्पति शास्त्रियों और पारिस्थितिकीविदों को शामिल करना चाहिये; जलमग्न द्वारका को पारदर्शी ट्यूब से जोड़कर भूमिगत संग्रहालय का निर्माण; प्राचीन सरस्वती नदी के आसपास के उत्खनित स्थल एवं श्री राम द्वारा भ्रमण किये गये महत्त्वपूर्ण स्थानों के लिये पर्यटन पैकेज देना; जीनोम अध्ययन के निष्कर्षों का व्यापक प्रचार प्रसार करना चाहिये कि आर्यों के आक्रमण का सिद्धान्त अब गलत साबित हो चुका है और उत्तर भारतीयों तथा द्रविड़ों के पूर्वज एक ही थे; मानव संसाधन विकास मंत्रालय को इन विभिन्न वैज्ञानिक शोध के निष्कर्षों को समस्त भारत के स्कूल एवं कालेजो की पुस्तकों में शामिल करना चाहिये। सेमिनार के दौरान की गयी उपर्युक्त अनुशंसाएँ विस्तृत रूप में एक अलग अध्याय में दी गयी है।

सेमिनार का समापन श्रीमती विनीता सूरी के धन्यवाद ज्ञापन के साथ सम्पन्न हुआ। उन्होंने विशेषज्ञों एवं वैज्ञानिकों को विशेष आभार व्यक्त किया जिन्होंने उच्च स्तर के शोध पत्र प्रस्तुत किये। राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान और पृथ्वी विज्ञान मंत्रालय द्वारा प्रदत्त सहायता के लिये धन्यवाद दिया। उन्होंने मुख्य अतिथि महोदय, सम्मानित अतिथियों एवं श्रोताओं को विशेष आभार व्यक्त किया और साथ में जन संचार संस्थान, इवेन्ट मैनेजर, कैटरर एवं अन्य सहयोगियों को भी धन्यवाद ज्ञापित किया।

विशेष: विश्वस्तरीय प्रख्यात परमाणु वैज्ञानिक डॉ. डी. एस. कोठारी ने भारतीय विज्ञान अकादमी में एक भाषण में कहा था, 'भारतीयों में राष्ट्रीय गर्व के अभाव के बारे में हम अफसोस कैसे कर सकते हैं जबकि उन्हें हमने देश के अत्यन्त प्राचीन अतीत की महान वैज्ञानिक उपलब्धियों से अवगत नहीं कराया ?'

इस राष्ट्रीय वैज्ञानिक संगोष्ठी के माध्यम से अपने देशवासियों को इन्हीं वैज्ञानिक उपलब्धियों से सुपरिचित कराने की महत्वाकांक्षा से विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय तथा पृथ्वी विज्ञान मंत्रालय से अनुरोध किया गया कि उनके पास प्राप्त वैज्ञानिक अनुसंधान

रिपोर्टों को मानव संसाधन विकास मंत्रालय के पास भेजें ताकि इन्हें स्कूलों एवं कॉलेजों के पाठ्यक्रम/पुस्तकों इत्यादि में सम्मिलित किया जाये और भविष्य में भी इनका समय-समय पर ऐसे ही समावेश होता रहे।

सरोज बाला
अशोक भटनागर
कुलभूषण मिश्र

हिन्दी रूपान्तर
डॉ. कृष्णानन्द सिन्हा
वैज्ञानिक (सेवानिवृत्त)
आर्यभट प्रेक्षण विज्ञान शोध संस्थान, नैनीताल

अनुशंसाएँ एवं कार्य योजना

'2000 वर्ष ई॰ पू॰ से पहले प्राचीन भारतीय साहित्य में वर्णित घटनाओं का वैज्ञानिक तिथि निर्धारण' विषय पर आइ-सर्व नई दिल्ली शाखा द्वारा एक अखिल भारतीय संगोष्ठी का आयोजन 30-31 जुलाई, 2011 को किया गया।

संगोष्ठी में प्रस्तुतियों के आधार पर कई अमूल्य सुझाव निकल कर आये। इनमें सम्बन्धित सरकारी विभागों, विश्वविद्यालयों, स्वायत्तशासी एवं सांविधिक निकायों जैसे राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान (एन आई ओ), भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण, भारतीय भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण एवं भारतीय मानव विज्ञान सर्वेक्षण जैसी संस्थाओं द्वारा अमल में लाई जाने वाली कुछ निम्नलिखित अनुशंसाएँ शामिल थी:

(*i*) विगत 30-40 वर्षों में नवीन वैज्ञानिक विधाओं एवं उपकरणों के आविष्कार से प्राचीन घटनाओं का तिथिकरण काफी कुछ संभव है जिससे अनावश्यक भाषाई अनुमान और धार्मिक विश्वासों मात्र पर निर्भर रहने की आवश्यकता में कमी आयी है। यह महसूस किया गया कि इतिहास को अब समाज विज्ञान एवं कला संकाय से हटकर विज्ञान संकाय का अभिन्न अंग होना चाहिए और संसार के विश्वविद्यालयों द्वारा इसे विज्ञान के बहु-आयामी रूप में स्वीकार करना चाहिए।

(*ii*) वैज्ञानिक रीति से तिथि निर्धारण से प्राचीन भारत की महत्त्वपूर्ण घटनाएँ जिनका वर्णन वेदों एवं अन्य ग्रंथों में किया गया है वह गल्प की श्रेणी से निकलकर इतिहास का अंग बनेंगी जिससे हम सभी भारतीयों में अपनी समृद्ध और सर्वाधिक प्राचीन परम्पराओं के प्रति गर्व का संचार होगा। इस प्रकार भाषाई अनुमानों पर आधारित एवं वैज्ञानिक सोच से वंचित कारणों से आभासी रूप से विश्व के विभिन्न समुदायों में जो कृत्रिम खाई दिखाई देती है, विशेष रूप से भारत में, उसके स्थान पर एक अधिक संगठित एवं शांतिप्रिय विश्व के सृजन में सहायता मिलेगी।

(*iii*) सुदूर अतीत की ऐतिहासिक घटनाओं एवं प्राचीन विज्ञान के ज्ञान से संस्कृत के ग्रन्थ भरे पड़े हैं। संगोष्ठी की प्रस्तुतियों ने खगोलीय विधि से तिथि निर्धारण की गई घटनाओं एवं प्राचीन नदियों तथा समुद्र में पानी के उतार-चढ़ाव में परस्पर एक सह-सम्बन्ध स्थापित किया। भारत के पश्चिमी घाट के लिए राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान द्वारा तैयार किये गए आँकड़ों से समुद्र की सतह में होने वाले परिवर्तन की प्राचीन ग्रंथों से पूर्ण पुष्टि होती है। पूर्वी और पश्चिमी घाटों पर इस प्रकार के और गहन वैज्ञानिक शोध की आवश्यकता महसूस की गयी।

(*iv*) पीएच. डी. शोध हेतु राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान से अपनी नीति में आवश्यक परिवर्तन हेतु अनुरोध किया गया जिससे छात्र कुछ ऐसे विषय ले सकें जैसे वेदों और महाकाव्यों में वर्णित ग्रहीय सन्दर्भ; ग्लेशिअर, नदियों और समुद्र की सतह में परिवर्तनों का सन्दर्भ; पुराणों और ग्रंथों में वर्णित वंशावलियों का पुनर्निर्माण आदि। शोध के इन परिणामों को हिंदी और अंग्रेजी में अन्य इच्छुक वैज्ञानिकों को उपलब्ध कराया जा सकेगा।

(*v*) विश्वविद्यालयों से अनुरोध किया गया कि शोध एवं पीएच. डी. हेतु अपनी नीतियों में ऐसे परिवर्तन करें जिससे दो-चार छात्र ऐसे बहु-आयामी शोध कर सकें जिसमें एक समन्वयक के साथ-साथ विभिन्न विभागों के सक्षम गाइड भी सहयोग कर सकें। न केवल अपने देश वरन विश्व की पुस्तकों में वर्णित प्राचीन घटनाओं के वैज्ञानिक तिथिकरण में यह एक बहुत बड़ा योगदान होगा।

(*vi*) अब तक स्कूलों और कालेजों में पढ़ाया जा रहा प्राचीन इतिहास आम तौर पर भाषायी अनुमानों और धार्मिक मान्यताओं पर आधारित है। बहुआयामी वैज्ञानिक अनुसन्धान की मदद से समुद्र और भूमि के नीचे दबे प्राचीन प्रमाणों को खोजने की तत्काल जरूरत है। इनमें प्राचीन ग्रंथों में निहित ग्रह संदर्भों का खगोलीय काल-निर्धारण भी शामिल है। इस कार्य में तारामण्डल साफ्टवेयर का इस्तेमाल किया जा सकता है।

(*vii*) मानव संसाधन विकास मंत्रालय को भारतीय इतिहास अनुसन्धान परिषद का पुनर्गठन करना चाहिये और इसमें खगोल शास्त्रियों, संस्कृत के विद्वानों, पुरातत्वविदों, भू-विज्ञानियों, समुद्र-विज्ञानियों, अन्तरिक्ष विज्ञानियों, पुरावनस्पति शास्त्रियों और पारिस्थितिकीविदों को शामिल किया जाना चाहिये ताकि प्राचीन भारतीय इतिहास की शुद्ध वैज्ञानिक रूप से और सोद्देश्य पुनर्रचना की जा सके। इन विधाओं का पूर्व में इतिहास लेखन में उपयोग नहीं किया गया है।

(*viii*) नवीनतम वैज्ञानिक उपकरणों और अनुसन्धानों से साबित हुआ है कि भारत के महाकाव्यों और वेदों में वर्णित कई घटनाओं और ऐतिहासिकता की वैज्ञानिक पुष्टि की जा सकती है, अतः इसके तर्कसंगत निष्कर्षों के लिए इसमें शोध की आवश्यकता है। इसके लिए महामहिम डॉ. ए० पी० जे० अब्दुल कलाम के सुझावों के अनुसार इस विषय पर कम से कम एक सौ शोधार्थियों को शोध शुरू करना चाहिए।

(*ix*) सेमिनार में दी गयी जानकारी का उपयोग पर्यटन को बड़े पैमाने पर बढ़ावा देने के लिए किया जा सकता है। इन उपायों में शामिल है:

(क) जलमग्न द्वारका को पारदर्शी ट्यूब से जोड़कर वहाँ भूमिगत संग्रहालय की स्थापना।

(ख) प्राचीन सरस्वती नदी के आसपास जिन क्षेत्रों की खुदाई की गयी है वहाँ के लिये पर्यटकों को आकर्षित करने के लिए पर्यटन पैकेज देना और

(ग) भगवान राम जिन महत्वपूर्ण स्थानों पर गये थे उनमें से जिन स्थानों पर अब भी उसी तरह पेड़, पौधो, जीव-जन्तु और अन्य स्थितियाँ हैं, वहाँ के लिए भ्रमण कार्यक्रम आयोजित करना।

(*x*) साहित्यिक संदर्भों, भू-वैज्ञानिक और पुरातात्विक अनुसन्धानों के साथ दूरसम्वेदी छवियों से सरस्वती नदी समूह और अन्य नदियों के प्राचीन जलमार्गों की व्यापक श्रृंखला का पता चलता है। जल संसाधान मंत्रालय को इन क्षेत्रों में लोगों की पानी की कमी की समस्या के समाधान के लिए इन नदियों की सूखी सतह के नीचे पेयजल के दोहन के लिए शोध कर्त्ताओं की एक टीम का गठन करना चाहिए।

(*xi*) सेमिनार के दौरान प्रस्तुत किए गए आनुवंशिक अध्ययनों से पता चला है कि न केवल 11,000 वर्ष (9,000 ई.पू.) से, बल्कि 55,000 वर्ष (53000 ई.पू.) से भारत के सभी भागों में बसे उत्तर भारतीयों, द्रविडों और आदिवासियों सहित सभी का आनुवांशिक प्रोफाइल एकसमान रहा है। इस प्रकार उन सबके पूर्वज एक ही थे। संस्कृति मंत्रालय को इस वास्तविकता का व्यापक प्रचार करना चाहिए, ताकि झूठ साबित हो चुके आर्यों के आक्रमण के सिद्धांत के तहत उपजे उत्तर-दक्षिण विभाजन की धारणा को मिटाया जा सके। इससे सभी भारतीयों को, उनके पूर्वजों के एक होने पर गर्व करने का मौका मिल सकेगा।

(*xii*) चिकित्सा और इतिहास के क्षेत्र में शोध के लिए संस्कृति मंत्रालय से अनुरोध किया गया कि वह भारतीय मानवविज्ञान सर्वेक्षण एवं विश्वविद्यालयों के मानवविज्ञान विभागों को

विगत 12,000-13,000 वर्षों पूर्व तक के भारतीय उप-महाद्वीप के लोगों के जीनोम/डीएनए विषय से सम्बंधित अध्ययन को बढ़ावा दें। इससे हजारों वर्षों से कतिपय क्षेत्रों में चली आ रही बीमारियों के डीएनए आधारित चिकित्सा पद्धति के विकास में सहायता मिलेगी। प्राचीन शासकों की वंशावलियों और अन्य वर्गों के लोगों की वंशावलियों में सह-सम्बन्ध वैज्ञानिक दृष्टिकोण से सुनिश्चित किये जाने से विभिन्न भारतीय वर्गों एवं समुदायों के लोगों में एकरूपता स्थापित किये जाने में सहायता मिलेगी।

(xiii) इस प्रस्तुति में यह भी बताया गया कि 99 प्रतिशत भारतीयों को भारत की प्राचीन सभ्यता की ऐतिहासिकता और प्राचीनता को प्रमाणित करने वाली 99 प्रतिशत वैज्ञानिक शोध रिपोर्टों के बारे में जानकारी नहीं है। ऐसा इसलिए है, क्योंकि पृथ्वी विज्ञान, संस्कृति, विज्ञान और प्रौद्योगिकी मंत्रालय ऐसी रिपोर्टें मानव संसाधन विकास मंत्रालय को नियमित रूप से प्रेषित नहीं करते है। इसके अलावा इस प्रकार के शोध के निष्कर्षों को देश भर के स्कूलों और कालेजों की पाठ्य पुस्तकों में शामिल करने के लिए एक सार्थक प्रणाली विकसित करने की सेमिनार में संस्तुति की गयी।

(xiv) भारतवर्ष के कोने-कोने में उक्त बहु-आयामी शोध परिणामों के प्रचार-प्रसार हेतु एक प्रणाली के सृजन एवं विकास पर बल पूर्वक कहा गया जिससे सभी जातियों, रंगों, मतावलंबियों एवं पृष्ठभूमि के लोगों में इस भावना का संचार हो सके कि वही वास्तव में इस भारत भूमि के वासी हैं, उनके पूर्वज एक ही रहे हैं जो कहीं बाहर से नहीं आये थे और उन्हें एक समृद्ध एवं प्राचीन सभ्यता विरासत में मिली है।

हिन्दी रूपान्तर
डॉ. कृष्णानन्द सिन्हा

सरोज बाला
निदेशक, आइ-सर्व, दिल्ली शाखा

रामायण में वर्णित घटनाओं का तिथि-निर्धारण: समुद्र की गहराइयों से आकाश की ऊँचाइयों तक के वैज्ञानिक प्रमाण

सरोज बाला
निदेशक, आइ-सर्व, दिल्ली शाखा

हम भारतीय विश्व की प्राचीनतम सभ्यता के वारिस हैं तथा हमें अपने गौरवशाली इतिहास तथा उत्कृष्ट प्राचीन संस्कृति पर गर्व होना चाहिए। किंतु दीर्घकालीन परतंत्रता ने हमारे गौरव को इतना गहरा आघात पहुँचाया है कि हम अपनी प्राचीन सभ्यता तथा संस्कृति के बारे में खोज करने की तथा उसको समझने की इच्छा ही छोड़ बैठे हैं। परन्तु स्वतंत्र भारत में पले तथा पढ़े-लिखे युवक-युवतियाँ सत्य की खोज करने में समर्थ हैं तथा वैज्ञानिक छानबीन के आधार पर निर्धारित तथ्यों तथा जीवन मूल्यों को विश्व के आगे गर्वपूर्वक रखने का साहस भी रखते हैं।

श्रीराम द्वारा स्थापित आदर्श हमारी प्राचीन परंपराओं तथा जीवन मूल्यों के अभिन्न अंग हैं। वास्तव में श्रीराम भारतीयों के रोम-रोम में बसे हैं। लेकिन प्रश्न उत्पन्न होता है कि आखिर श्रीराम कौन थे? कहाँ पैदा हुए? क्या उन्होंने अयोध्या से रामेश्वरम तक जंगलों तथा पर्वतों की वास्तव में यात्रा की थी?

वेदों पर वैज्ञानिक शोध संस्थान की टीम ने आधुनिक वैज्ञानिक ढंग से की गई खोजबीन के माध्यम से यह जानने का प्रयत्न किया कि क्या वाल्मीकीय-रामायण में वर्णित घटनाओं की सत्यता सिद्ध हो सकती है, क्या उनमें वर्णित ग्रहों नक्षत्रों की स्थितियों की वास्तविक तिथियाँ प्लैनेटेरियम साफ्टवेयर के माध्यम से निर्धारित हो सकती हैं तथा क्या इन क्रमिक खगोलीय तिथियों का पुष्टिकरण पुरातत्व, भूविज्ञान, समुद्रविज्ञान, भौगोलिक, उपग्रह चित्र व आनुवंशिक प्रोफाइल आदि की उपलब्ध अनुसंधान रिपोर्टें करती हैं। छः वर्ष के गहन अध्ययन तथा अनुसंधान के पश्चात चौंका देने वाले वैज्ञानिक तथ्य सामने आये। इन सभी

वैज्ञानिक तथ्यों को लड़ी में पिरोकर पाठकों के सामने रखा जा रहा है ताकि वे स्वयं ही निर्धारित करें कि आस्था से परे उनका विवेकशील मन रामायण में वर्णित महत्त्वपूर्ण घटनाओं के वैज्ञानिक तिथि निर्धारण को, जो इस पुस्तक में किया गया है, तर्कसंगत तथा विश्वसनीय मानता है अथवा नहीं।

नूतन युग का प्रारम्भ लगभग 12000 वर्ष से भी पूर्व हुआ, यह अब सभी मानते हैं। परिणाम स्वरूप भूमध्य रेखा के आसपास ग्लेशियरों के पिघलने से जो नदियाँ बहने लगी उनके आसपास स्वतः मानव सभ्यताओं का समकालिक विकास होने लगा, उदाहरणतः दक्षिण भारत, श्रीलंका, अफ्रीका तथा दक्षिण अमेरिका आदि में। जब विकसित होती हुई सभ्यताओं के साथ-साथ आबादी बढ़ने लगी, तब इन नदियों का पानी कम पड़ने लगा, तो लोगों ने भूमध्यरेखा से उत्तर की तरफ स्थानान्तरण (अभिगमण) प्रारंभ कर दिया। उत्तर दिशा की तरफ ऐसा स्थानान्तरण धीरे-धीरे सैंकड़ों वर्षों तक चलता रहा, परन्तु जब ये दक्षिण भारतीय लोग हिमालय से बहने वाली नदियों के किनारे पहुँचे तो उन्हें हजारों वर्षों तक की जल, खान-पान तथा घर आदि की सुरक्षा गंगा, सिन्धु तथा सरस्वती नदियों द्वारा सींचे हुए लम्बे चौड़े उपजाऊ, खनिज व खाद्यान्न से भरपूर गंगा-सिन्धु के मैदानों ने प्रदान की। सभ्यता के विकास का अपने चरम पर पहुँचना इसलिये स्वाभाविक ही था, ऐसा न होना प्रकृति के नियम के प्रतिकूल होता। तभी तो आज से 9000 वर्ष पूर्व से 6000 वर्ष पूर्व वेदों और उपनिषदों की रचना हुई तथा श्रीराम तथा उनके पूर्वजों और अग्रजों ने भारतीयों को अद्भुत लोकहितकारी राज्य दिया जिसे आज तक लोग रामराज्य के नाम से प्रेम सहित याद करते हैं।

कई हज़ार वर्षों के बाद (लगभग 5000 वर्ष पूर्व) हिमालय से निकलने वाली कई नदियों की धारा कई प्राकृतिक कारणों से अवरुद्ध हो गई, जैसे कि सरस्वती नदी एवं इसकी कई सहायक नदियों ने भूगर्भीय हलचल के कारण या तो रास्ता बदल लिया, या वे सूख गईं। परिणाम स्वरूप जनसंख्या अधिक और पानी कम, स्वभाविक ही था कि लोग उत्तरी भारत से मध्यएशिया, तथा यूरोप की तरफ स्थानान्तरित होने लगे जहाँ वो व्यापार के लिये पहले से ही जाते आते थे। पुरा-पर्यावरण विशेषज्ञों का मानना है कि जलवायु (Ecological cycle) का यही चक्र लाखों वर्षों से हिमयुग एवं नूतनयुग की आवृत्ति व पुनरावृत्ति करता रहा है तथा करता रहेगा। इसलिये जब पूरे विश्व की सभ्यता का इतिहास वैज्ञानिक ढंग से लिखा जायेगा तो ये 4-5 हज़ार वर्ष नहीं, अपितु 10000 वर्ष पुराना होगा।

विश्व का अब तक का इतिहास, विशेष रूप से भारतीय उप-महाद्वीप का, अधिकतर भाषाई अनुमानों, धार्मिक आस्थाओं अथवा जन-श्रुतियों पर आधारित रहा है। विगत 30-40 वर्षों में ऐसी कई नयी वैज्ञानिक विधाओं तथा तकनीकों का विकास हुआ है जिनसे प्राचीन घटनाओं की तिथियों का वैज्ञानिक रीति से सही-सही निर्धारण किया जा सकता है। उदाहरणार्थः

(क) ग्रहीय सन्दर्भों की खगोलीय गणना हेतु प्लेनेटेरियम साफ्टवेयर,

(ख) उपग्रह आधारित सुदूरसंवेदन की तकनीक,

(ग) पानी के नीचे उत्खनन एवं जिओस्पेशिअल विधियां,

(घ) रेडियो कार्बन डेटिंग, थर्मोल्युमिनिसैंस डेटिंग,

(ड) मानव जीनोम के अध्ययन, जैविक एवं सांस्कृतिक मानव-विज्ञान,

(च) पुरावनस्पति, पुराजीवविज्ञान एवं पुराजलवायु के अध्ययन,

(छ) भौगोलिक एवं भूगर्भीय शोध के साधन आदि।

इन्हीं वैज्ञानिक विधाओं तथा तकनीकों का विशुद्ध उपयोग किया गया, वाल्मीकीय-रामायण में वर्णित घटनाओं की तिथियाँ सुनिश्चित करने के लिये। छः वर्ष के प्रयत्नों के बाद जब इन तिथियों का प्लेनेटेरियम साफ्टवेयर के माध्यम से सिलसिलेवार तिथि निर्धारण 7000 वर्ष पूर्व के आसपास सुनिश्चित हो गया तो अन्य वैज्ञानिक अनुसन्धान रिपोर्टों ने उनका पुष्टिकरण बहुत अभूतपूर्व तरीके से किया। राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान द्वारा बनाई गई 'समुद्र के जलस्तर में आये उतार-चढ़ाव' की रिपोर्ट में समुद्र का जलस्तर 7000-7200 वर्ष पूर्व लगभग 3 मीटर नीचे था जिस गहराई पर आज रामसेतु है। पुरातत्व व पुरावनस्पति विभाग की रिपोर्टों के अनुसार बहुत से स्थान पेड़, पौधे तथा जड़ी बूटियाँ जो रामायण में वर्णित है, पिछले 6-7 हजार वर्षों से भारत में लगातार उसी तरह मिलते हैं। नदी स्तरों में उतार चढ़ाव पर ग्लेशियौलोजी, भूगर्भीय तथा उपग्रह रिपोर्टें रामायण में वर्णित तथ्यों का हूबहू पुष्टिकरण करती हैं।

श्रीराम की कहानी प्रथम बार महर्षि वाल्मीकि ने लिखी थी। वाल्मीकि द्वारा रचित "रामायण" की रचना श्रीराम के अयोध्या में सिंहासनारूढ़ होने के बाद की गई। महर्षि वाल्मीकि खगोलविद्या के महान ज्ञाता थे। उन्होंने श्रीराम के जीवन में घटित घटनाओं से संबंधित तत्कालीन ग्रहों, नक्षत्रों और राशियों की स्थितियों का विस्तार से वर्णन किया था। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि ग्रहों, नक्षत्रों तथा राशियों की उसी स्थिति में पुनरावृत्ति

हज़ारों सालों में भी नहीं होती। वास्तव में, यदि अयन चलन को भी ध्यान में रखें तो यह 26000 वर्ष से पहले नहीं होती। इन खगोलीय स्थितियों की वास्तविक तिथियाँ "प्लैनेटेरियम गोल्ड" सॉफ़्टवेयर के माध्यम से जानी जा सकती हैं।

भारतीय राजस्व सेवा में कार्यरत श्री पुष्कर भटनागर ने अमेरिका से 'प्लैनेटेरियम गोल्ड' (फ़ॉगवेयर पब्लिशिंग का) नामक सॉफ़्टवेयर प्राप्त किया जिससे सूर्य/चंद्रमा के ग्रहणों की तिथियाँ, अन्य ग्रहों तथा नक्षत्रों की स्थिति पर आधारित तिथियाँ खगोलीय पद्धति से जानी जा सकती हैं। इसके द्वारा उन्होंने महर्षि वाल्मीकि द्वारा वर्णित खगोलीय स्थितियों के आधार पर आधुनिक अंग्रेजी कैलेंडर की तिथियाँ निकाली। इस प्रकार उन्होंने श्रीराम के जन्म से लेकर 14 वर्ष के वनवास के बाद वापस अयोध्या पहुँचने तक की घटनाओं की तिथियों का पता लगाया। इन सबका अत्यंत रोचक एवं विश्वसनीय वर्णन उन्होंने अपनी पुस्तक में किया है जिसमें से कुछ महत्त्वपूर्ण उदाहरण यहाँ भी लिए गए हैं। श्री अशोक भटनागर द्वारा किये गये पुष्टिकरण, स्पष्टिकरण तथा विवर्धन को भी यहाँ उपयोग में लाया गया है।

श्रीराम के जन्म की तिथि

महर्षि वाल्मीकि ने बाल कांड के सर्ग 18 के श्लोक 8 से 10 (1/18/8-10) में श्रीराम के जन्म के समय की ग्रहों, नक्षत्रों तथा राशियों की स्थितियों का इस प्रकार वर्णन किया है-

ततो यज्ञे समाप्ते तु ऋतूनां षट् समत्ययुः।
ततश्च द्वादशे मासे चैत्रे नावमिके तिथौ ॥८॥
नक्षत्रेऽदितिदैवत्ये स्वोच्चसंस्थेषु पञ्चसु ।
ग्रहेषु कर्कटे लग्ने वाक्पताविन्दुना सह ॥९॥
प्रोद्यमाने जगन्नाथं सर्वलोकनमस्कृतम् ।
कौसल्याजनयद् रामं दिव्यलक्षणसंयुतम् ॥१०॥ **वा.रामा. ॥१/१८/८-१०॥**

अर्थात् - यज्ञ-समाप्ति के पश्चात् जब छः ऋतुएँ बीत गयीं, तब बारहवें मासमें चैत्र के शुक्लपक्ष की नवमी तिथि को पुनर्वसु नक्षत्र एवं कर्क लग्न में कौसल्यादेवी ने दिव्य लक्षणों से युक्त, सर्वलोकवन्दित श्रीराम को जन्म दिया। उस समय (सूर्य, मंगल, शनि, गुरु और शुक्र-ये) पाँच ग्रह अपने-अपने उच्च स्थान में विद्यमान थे तथा लग्न में चन्द्रमा के साथ बृहस्पति विराजमान थे।

वैदिक काल से लेकर आजतक ग्रहों की स्थितियों को उच्च स्थान तथा नीच स्थान से वर्णित किया जाता रहा है और सभी ग्रहों की यह स्थितियाँ वैसे ही बिना परिवर्तन के दर्शाई जाती हैं **(सारणी-1 का अवलोकन करें)**।

सारणी-1: भारतीय प्रणाली में ग्रहों के उच्च स्थान

ग्रह	*Graha*	उच्च स्थान की राशि	Constellation of Exalted Position
सूर्य	Sun	मेष	Aries
चन्द्रमा	Moon	वृषभ	Taurus
मंगल	Mars	मकर	Capricorn
बुद्ध	Mercury	कन्या	Virgo
बृहस्पति	Jupiter	कर्कट	Cancer
शुक्र	Venus	मीन	Pisces
शनि	Saturn	तुला	Libra

यह एक खगोलिक नियम है कि जब सूर्य अपने उच्च स्थान (मेष) में होगा तो बुद्ध अपने उच्च स्थान अर्थात् कन्या में नहीं हो सकता। इसलिये वाल्मीकि जी द्वारा वर्णित पाँच ग्रहों में बुद्ध शामिल नहीं है। अन्य ग्रहों नक्षत्रों की स्थितियाँ इस प्रकार थी:-

1. सूर्य मेष में
2. चंद्रमा पुनर्वसु के निकट कर्क में
3. बृहस्पति कर्क में
4. शनि तुला में
5. मंगल मकर में
6. शुक्र मीन में
7. चैत्र माह, शुक्ल पक्ष
8. अमावस्या के पश्चात नवमी तिथि
9. कर्क लग्न (कर्क राशि का पूर्व में उदय)

जब उपर्युक्त खगोलीय स्थिति को कम्प्यूटर में प्रविष्ट किया गया तो 'प्लैनेटेरियम गोल्ड' सॉफ्टवेयर के माध्यम से यह निर्धारित किया गया कि 10 जनवरी, 5114 ई.पू. दोपहर के समय अयोध्या के अक्षांश तथा देशांतर (25°N 81°E) से ग्रहों, नक्षत्रों तथा राशियों की स्थिति बिल्कुल वही थी जो महर्षि वाल्मीकि ने वर्णित की है। इस प्रकार श्रीराम का जन्म 10 जनवरी सन् 5114 ई.पू. 12 से 1 बजे के बीच हुआ। जब इस तिथि को सूर्य कैलेंडर से चन्द्र कैलेंडर में साफ्टवेयर के माध्यम से परिवर्तित किया गया तो यह दिन चैत्र मास की शुक्ल पक्ष की नवमी तिथि था। पूरे भारत में आजतक ठीक इसी दिन राम जन्मोत्सव मनाया जाता है। श्रीराम जी के जन्म के समय की आकाशीय स्थिति के लिये **स्लाइड-1 देखें।**
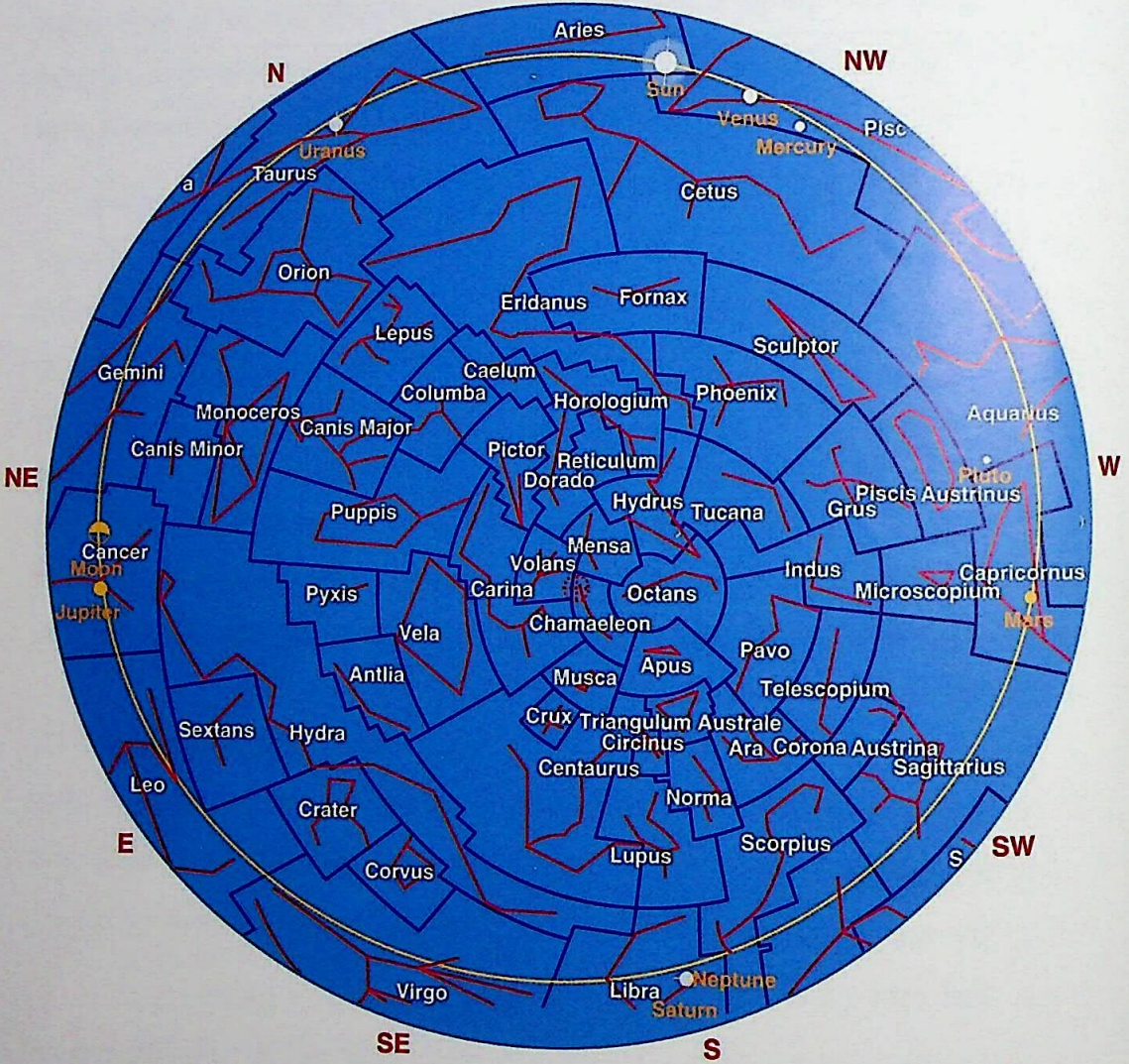
स्लाइड-1: श्री राम के जन्म के समय (दिनांक-10 जनवरी 5114 ई.पू. 12:30 अपराह्न) पर ग्रहों की स्थिति।

श्रीराम के वनगमन की तिथि

वाल्मीकीय-रामायण के अयोध्या कांड (2/4/18) के अनुसार महाराजा दशरथ श्रीराम का राज्याभिषेक करना चाहते थे क्योंकि उस समय उनका नक्षत्र सूर्य, मंगल और राहु से घिरा हुआ था। ज्योतिषियों के अनुसार ऐसी खगोलीय स्थिति में या तो राजा मारा जाता है या वह किसी षडयंत्र का शिकार हो जाता है। राजा दशरथ मीन राशि के थे और उनका नक्षत्र रेवती था। ये सभी तथ्य कम्प्यूटर में डाले गए तो पाया कि 5 जनवरी वर्ष 5089 ई.पू. के दिन सूर्य, मंगल और राहु तीनों मीन राशि के रेवती नक्षत्र पर स्थित थे। यह सर्वविदित है

कि राजतिलक वाले दिन ही राम को वनवास जाना पड़ा था। इस प्रकार यह वही दिन था जब श्रीराम को अयोध्या छोड़कर 14 वर्ष के लिए वन में जाना पड़ा। इस हिसाब से उस समय श्रीराम की आयु 25 वर्ष (5114-5089 ई.पू.) निकलती है। वाल्मीकीय रामायण में अनेक श्लोक यह इंगित करते हैं कि जब श्रीराम ने 14 वर्ष के लिए वनवास को प्रस्थान किया तब वे 25 वर्ष के थे।

खर-दूषण के साथ युद्ध के समय सूर्यग्रहण

वाल्मीकीय-रामायण के अनुसार वनवास के 13वें साल के मध्य में श्रीराम का खर-दूषण से युद्ध हुआ। उस समय सूर्यग्रहण लगा था और मंगल ग्रहों के मध्य में था। जब इस तारीख के बारे में कम्प्यूटर सॉफ़्टवेयर के माध्यम से जाँच की गई तो पता चला कि यह तिथि 7 अक्तूबर 5077 ई.पू. (अमावस्या) थी। इस दिन जो सूर्यग्रहण लगा उसे पंचवटी (20°N 73°E) से देखा जा सकता था। उस दिन ग्रहों की स्थिति बिल्कुल वैसी ही थी जैसी वाल्मीकि जी ने वर्णित की - मंगल ग्रह बीच में था-एक दिशा में बुध, शुक्र तथा बृहस्पति थे तथा दूसरी दिशा में चन्द्रमा, सूर्य तथा शनि थे (**स्लाइड-2 देखें**)।

रामायण में वर्णित अन्य ग्रहण

किष्किंधा कांड में वाल्मीकि जी ने श्रीराम द्वारा बाली के वध से पहले सूर्यग्रहण का संदर्भ दिया है। महर्षि वाल्मीकि लिखते हैं कि जिस रोज बाली का वध हुआ, उसी दिन प्रातः सुग्रीव ने बाली के किले में जाकर गर्जना की। इस गर्जना को सुनकर बाली का चेहरा राहु द्वारा ग्रसित सूर्य जैसा ही लाल दिखाई दे रहा था (4/15/3)। आषाढ़मास की अमावस्या वाले दिन का यह सूर्य ग्रहण 3 अप्रैल, 5076 ई.पू. से किष्किंधा (16°N 77°E) से सॉफ़्टवेयर के माध्यम से साफ देखा जा सकता है।

सुन्दरकांड में जब श्री हनुमान सीता जी से मिलने अशोक वाटिका पहुँचते हैं, उस समय चन्द्रग्रहण का संदर्भ है (5/19/14, 5/29/7 तथा 5/35/87)। रावण के डराने, धमकाने व प्रताड़ित करने के बाद भी जब सीता जी नहीं मानी तब रावण वापिस चला गया। उस समय सीता जी का चेहरा 'राहु की पकड़ से मुक्त हुए पूर्ण चन्द्रमा की तरह ही दिखाई दे रहा था। यह चन्द्र ग्रहण 12 सितम्बर, 5076 ई.पू. (मार्गशीर्ष की पूर्णिमा) को सांय 4:20 से 6:57 तक श्रीलंका (7°N 80°E) से दिखाई दिया।
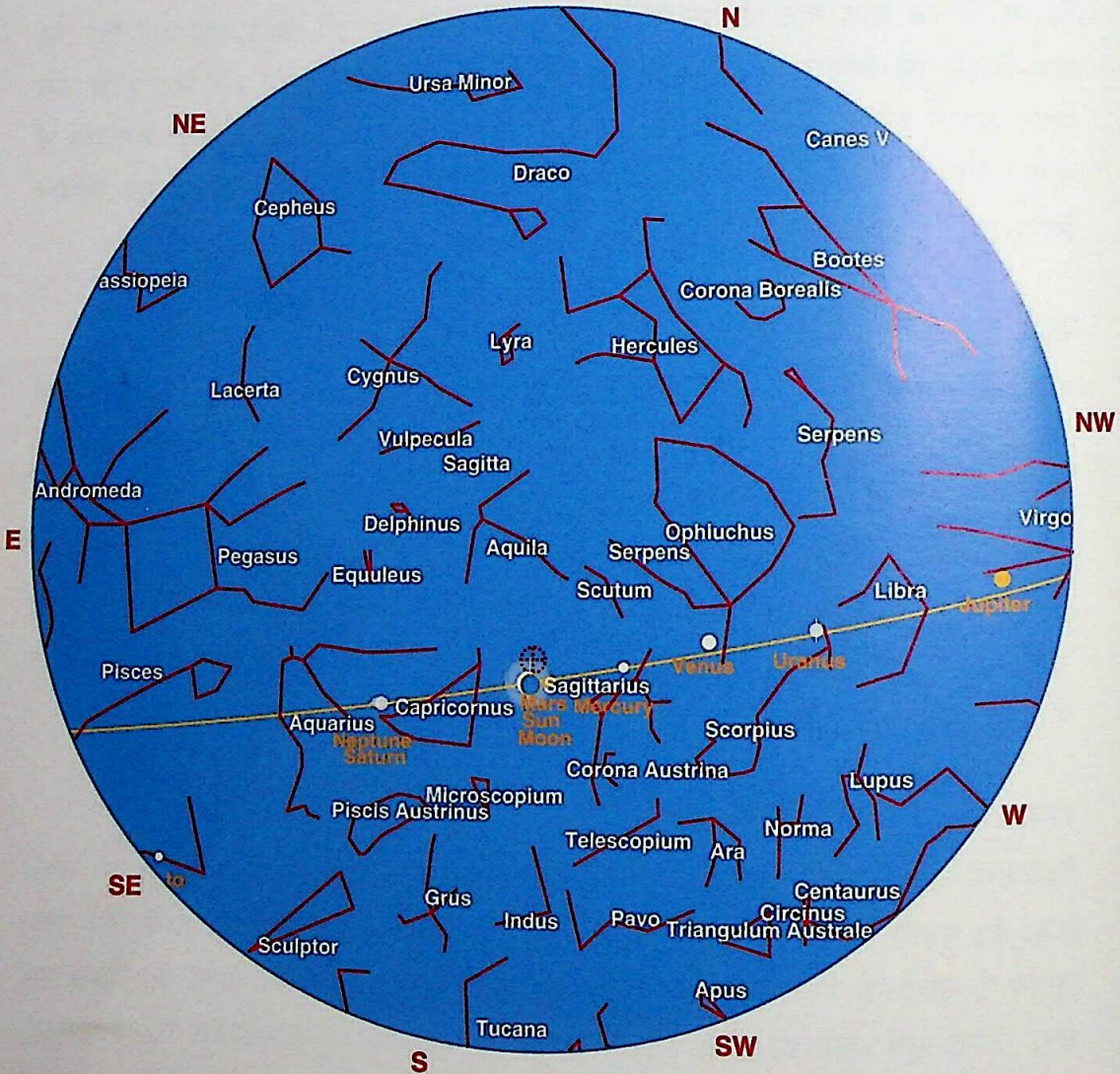
स्लाइड-2: खरदूषण के साथ युद्ध के दौरान 7 अक्तूबर 5077 ई.पू. को सूर्य ग्रहण

अन्य महत्वपूर्ण तिथियाँ

किसी एक समय पर बारह में से छह राशियों को ही आकाश में देखा जा सकता है। वाल्मीकि द्वारा रचित रामायण में हनुमान के श्रीलंका से समुद्र के मध्य स्थित सुनाभ पर्वत आने का समय सुबह के 6:30 बजे से 11 बजे तक, लगभग साढ़े चार घंटे था। आठ राशियों, ग्रहों तथा नक्षत्रों के दृश्य के साथ इस तथ्य का वाल्मीकीय-रामायण में चित्रमय और काव्यात्मक ढंग से वर्णन किया गया है। वाल्मीकीय-रामायण के अध्याय 5 के सर्ग 57 (1, 2, 3) में वर्णित ग्रहों तथा नक्षत्रों के ये सभी विवरण सॉफ़्टवेयर द्वारा दर्शाए गए 14 सितम्बर 5076 ई.पू. को दर्शाए गए आकाश दृश्य से बिल्कुल मिलते है।

स्लाइड-3 में 14 सितम्बर 5076 ई.पू. को श्रीलंका (7°N 80°E) से 6:30 बजे के क्षितिज का दृश्य दिखाया गया है। रामायण में दिए गए वर्णन के अनुसार ध्यान दें कि सूर्य तथा चन्द्रमा दोनों एक साथ चमक रहे हैं। पुर्नवसु नक्षत्र मिथुन राशि में चमक रहा है जो एक विशाल मछली के सदृश है। चंद्रमा, मंगल तथा बृहस्पति चमक रहे हैं। पुष्य (कर्क राशि) तथा स्वाति (कन्या राशि) भी दृष्टिगोचर हो रहे है। वृश्चिक राशि इन्द्र के वाहन ऐरावत के सदृश्य दिखाई दे रही है जो किसी हाथी की सूँड़ के समान दिखाई दे रही है। यह वही समय होना चाहिए जब हनुमान ने वापसी यात्रा आंरभ की थी (स्लाइड-3 देखें)।
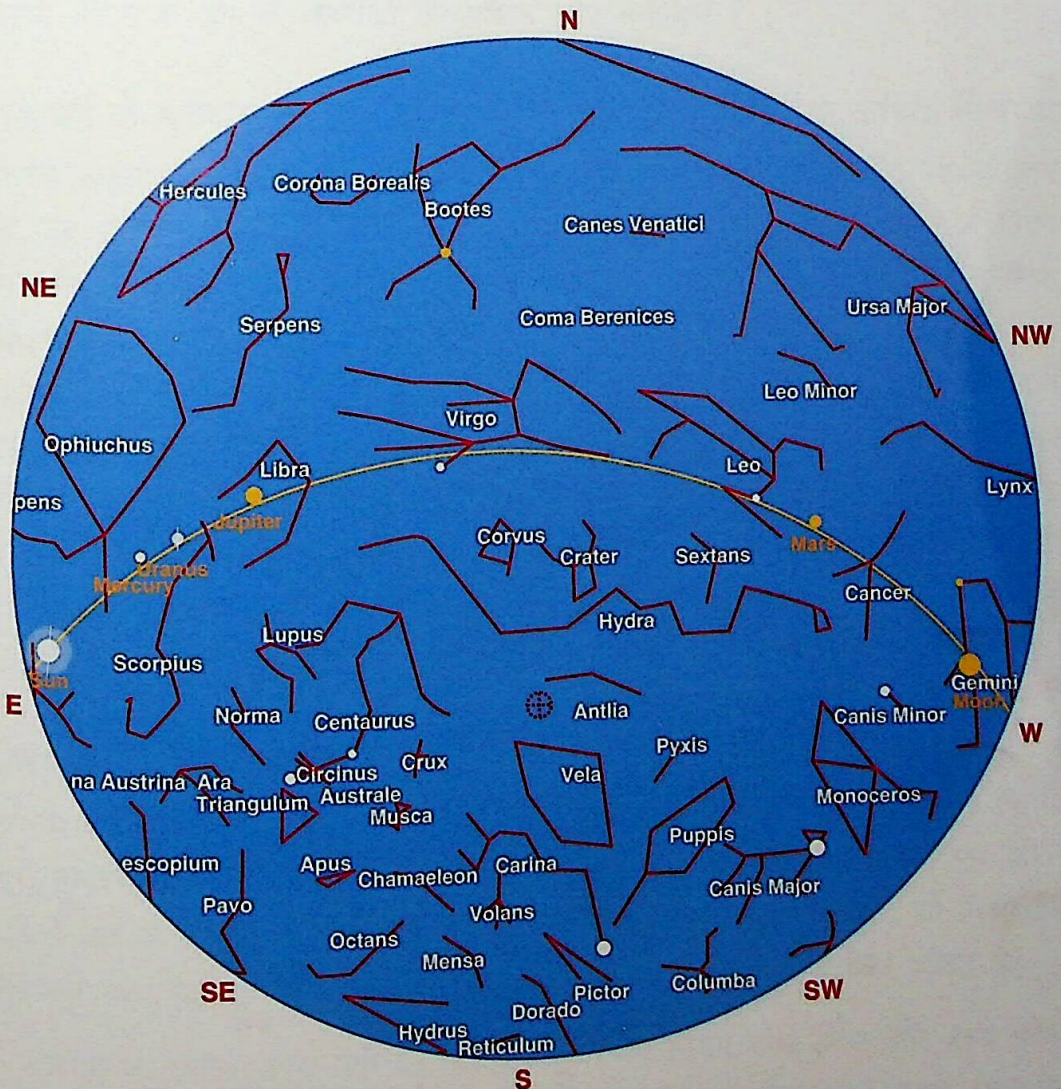
स्लाइड-3: हनुमान जी की श्रीलंका से वापसी का दिनांक तथा समय-14 सितम्बर 5076 ई.पू. प्रातः 6:30 बजे

स्लाइड-4 में 14 सितम्बर 5076 ई.पू. को श्रीलंका से प्रातः 10:00 बजे के आकाश का दृश्य दिखाई दे रहा है। पिछली स्लाइड हनुमान जी की वापसी यात्रा आरंभ करने के समय की है, जबकि यह स्लाइड उस समय को दिखाती है, जब हनुमान जी बीच समुद्र में पहुँच गए थे तथा एक छोटी पहाड़ी पर आराम हेतु रूके। पिछली स्लाइड में केवल एक नक्षत्र नहीं दिखाया जा सका था, जो मकर राशि में श्रावण नक्षत्र था जो लगभग 10:00 बजे प्रातः उदित होता है। यह स्लाइड उस समय को प्रदर्शित करती है जिस समय इस सन्दर्भ में वर्णित सभी पिण्ड उदित हो चुके थे। **(स्लाइड-4 देखें)**।
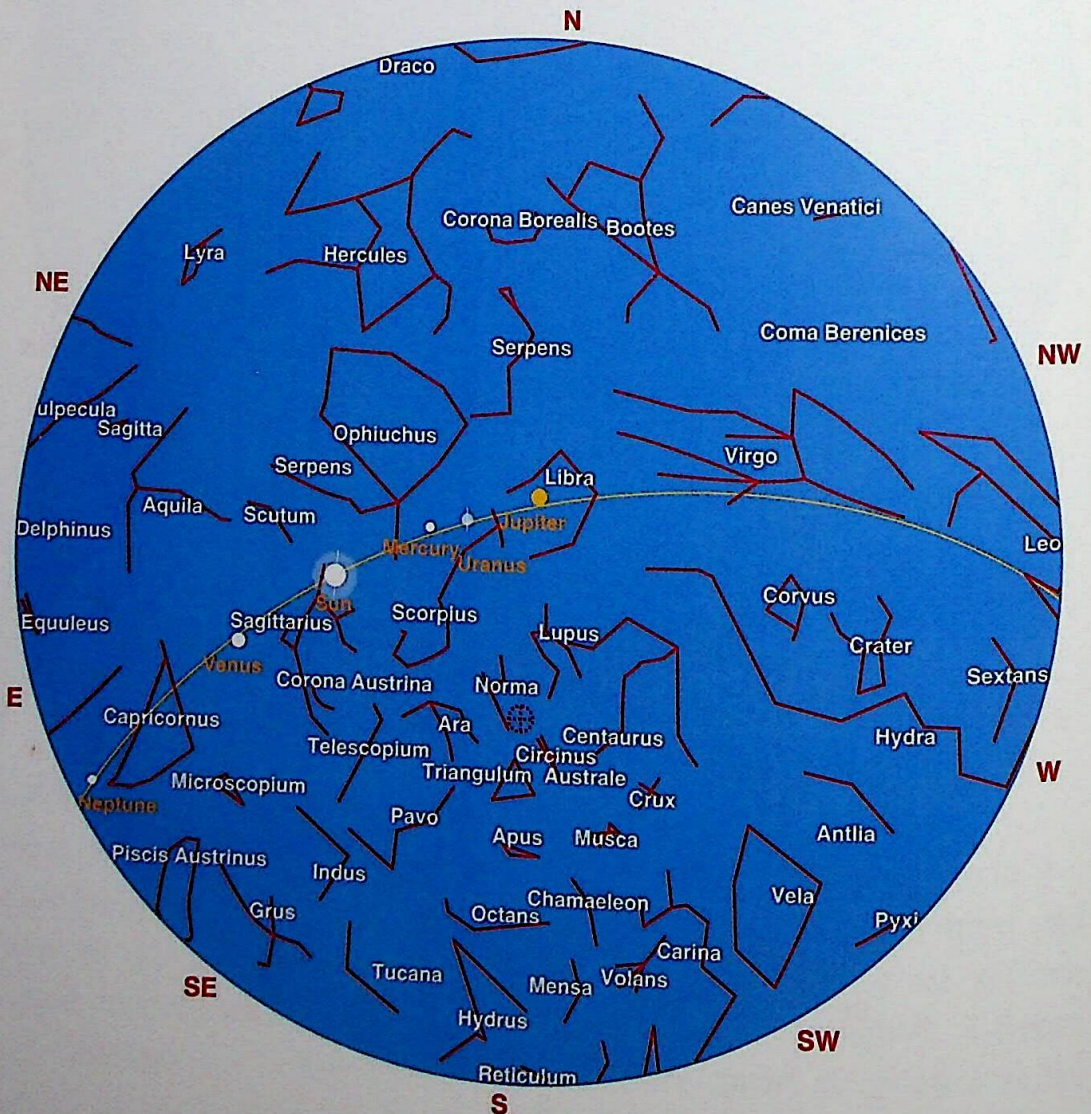
स्लाइड-4: हनुमान जी की श्रीलंका से वापसी का दिनांक तथा समय-14 सितम्बर 5076 ई.पू. प्रातः 10:00 बजे

वाल्मीकीय-रामायण के अन्य विविध अध्यायों में वर्णित ग्रह स्थिति के आधार पर सॉफ़्टवेयर द्वारा रावण के मारे जाने की तिथि 4 दिसंबर 5076 ई.पू. निकाली गई है। श्रीराम ने 2 जनवरी 5075 ई.पू. को वनवास के 14 वर्ष पूरे किए थे और यह चैत्र मास के शुक्ल पक्ष की नवमी का दिन था । इस तरह जब श्रीराम अयोध्या वापस आए, तब उनकी आयु 39 वर्ष की थी (5114-5075 ई.पू.)।

इस तरह वाल्मीकीय-रामायण में वर्णित श्रीराम के जीवन की महत्त्वपूर्ण तिथियों का खगोलीय ग्रह सन्दर्भों से निकाली गई तिथियों से मेल खाना मात्र संयोग नहीं हो सकता। इसमें श्रीराम के युग के अनगिनत ऐतिहासिक तथ्य समाविष्ट हैं ।

14 वर्ष के वनवास की अवधि में श्रीराम के भ्रमण-स्थलों का क्रमिक विवरण

अनेक अनुसंधानकर्ताओं ने, जिनमें हमारे एक सहयोगी डॉ. राम अवतार का भी बड़ा योगदान है, उन स्थानों के बारे में अनुसंधान किया है जहाँ श्रीराम 14 वर्षीय वनवास के दौरान गए थे। ये स्थान वे ही हैं जहाँ वाल्मीकीय-रामायण के अनुसार श्रीराम गए थे । अयोध्या से प्रारंभ करते हुए श्रीराम रामेश्वरम तक पहुँचे। डॉ. राम अवतार ने श्रीराम और सीता के जीवन की घटनाओं से जुड़े ऐसे 200 से भी अधिक स्थानों का पता लगाया है जहाँ आज भी तत्संबंधी स्मारकस्थल विद्यमान हैं। स्थानीय लोगों का विश्वास है कि श्रीराम वास्तव में इन स्थानों पर आए थे। अयोध्या कांड, अरण्य कांड, किष्किंधा काण्ड और सुन्दर कांड (अध्याय 2, 3, 4 और 5) में श्रीराम द्वारा वनवास के समय भ्रमण किए गए स्थानों का विवरण मिलता है जिनमें कई नदियों तथा सरोवरों के किनारे स्थित कई ऋषियों के आश्रमों का भी उल्लेख है। इन यात्रा विवरणों को पाँच चरणों में बाँटा जा सकता है:

प्रथम चरण – गंगा क्षेत्र

श्रीराम कई स्थानों पर गए जिनमें शामिल हैं – तमसा नदी (मंदाह)– अयोध्या से 20 किमी. दूर, तत्पश्चात उन्होंने गोमती नदी (दिए गए **मानचित्र-1** में बिंदु 2 से 7 तक) पार की । उसके बाद वे गंगा तट पर पहुँचे और शृंगवेरपुर (सिंगरौर) में प्रवेश किया जो निषादराज गुह का राज्य था (इलाहाबाद से 20 किमी. दूर) तथा केवट प्रसंग के लिए प्रसिद्ध है।

संगम के समीप यमुना नदी को पार करने के बाद श्रीराम उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश की सीमा पर चित्रकूट पहुँचे। यहाँ स्थित स्मारकों में शामिल हैं, वाल्मीकि आश्रम, माण्डव्य

आश्रम, भरतकूप इत्यादि जो आज भी मौजूद हैं। भरत मिलाप के बाद उन्होंने चित्रकूट से प्रस्थान किया और सतना (मध्य प्रदेश) स्थित अत्रि ऋषि के आश्रम गए ।

द्वितीय चरण – दण्डक वनक्षेत्र

लक्ष्मण व सीता के साथ श्रीराम ने मध्यप्रदेश व छत्तीसगढ़ के घने जंगलों, नदियों, सरोवरों एवं अन्य तालाबों के आसपास भ्रमण किया जहाँ आज भी तत्संबंधी अनेक स्मारक-स्थल स्थित हैं।

वे मध्य प्रदेश में दंडक अरण्य क्षेत्र तथा सतना में सरभंग एवं सुतीक्ष्ण मुनि आश्रमों (दिए गए **मानचित्र-1** के 36-41 बिंदु) में गए। मध्य प्रदेश एवं छत्तीसगढ़ क्षेत्रों में नर्मदा व महानदी नदियों के किनारे दस वर्षों तक कई ऋषि आश्रमों का भ्रमण किया। बाद में सुतीक्ष्ण आश्रम वापस आए। पन्ना, रायपुर, बस्तर और जगदलपुर में कई स्मारक विद्यमान हैं, उदाहरणतः मांडव्य आश्रम, शृंगी आश्रम, राम लक्ष्मण मंदिर आदि। कई नदियों, तालाबों, पर्वतों और वनों को पार करने के पश्चात वे नासिक में अगस्त्य आश्रम गए जहाँ अगस्त्य मुनि ने श्रीराम को अग्निशाला में बनाए गए शस्त्र भेंट किए।

तीसरा चरण – गोदावरी के किनारे

श्रीराम, लक्ष्मण व सीता अगस्त्य आश्रम से पंचवटी रहने के लिए गोदावरी के किनारे से गए। नासिक में गोदावरी के तट पर पाँच वटवृक्षों का स्थान पंचवटी कहा जाता है (दिए गए **मानचित्र-1** का 116 बिंदु)। यह स्थल शूर्पणखा प्रसंग तथा खर व दूषण के साथ युद्ध के लिए प्रसिद्ध है – वाल्मीकीय-रामायण में उल्लेखित 'जनस्थान' अब भी मौजूद हैं ।

मारीच वध-स्थल पर भी स्मारक अस्तित्व में हैं; जिनमें शामिल हैं मृगव्याधेश्वर और बनेश्वर। वास्तव में, नासिक क्षेत्र स्मारकों से भरा पड़ा है, जैसे कि सीता सरोवर, राम कुंड, त्रयम्बकेश्वर आदि।

इस घटना के बाद रावण ने सीता का हरण किया और जटायु का भी वध किया – जिसकी स्मृति नासिक से 56 किमी. दूर ताकेड गाँव में 'सर्वतीर्थ' नामक स्थान पर आज भी संरक्षित है ।

चतुर्थ चरण – तुंगभद्रा तथा कावेरी नदियों के क्षेत्र

श्रीराम तथा लक्ष्मण सीता की खोज में तुंगभद्रा एवं कावेरी नदी क्षेत्रों के अनेक स्थलों पर गए। जटायु और काबंध से मिलने के पश्चात ऋष्यमूक पर्वत पहुँचने के लिए वे दक्षिण की

मानचित्र-1: श्रीराम के वनगमन स्थल (लाल बिन्दुओं से इंगित)
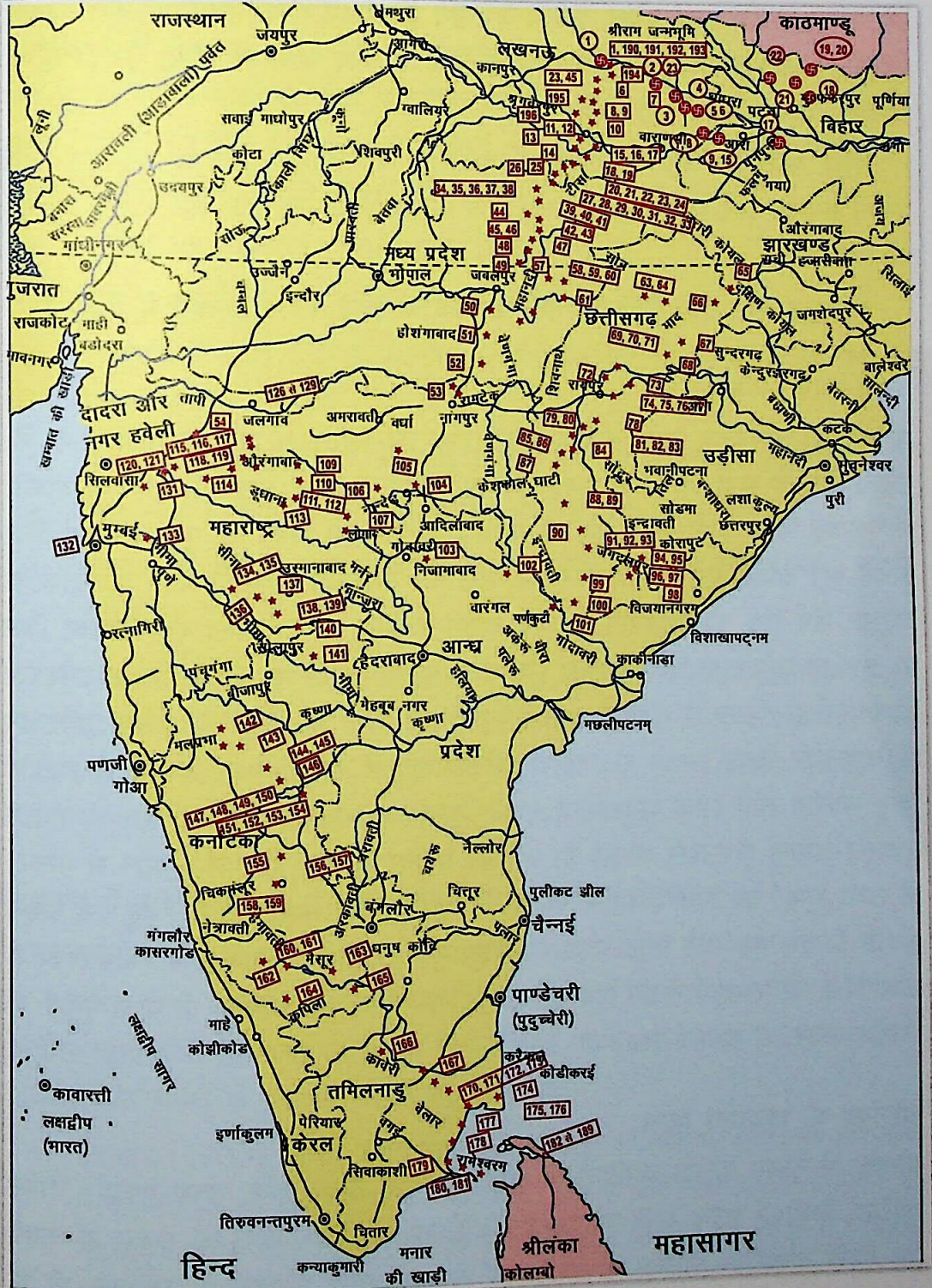
ओर गए । मार्ग में पम्पा सरोवर क्षेत्र में वे शबरी के आश्रम में गए जिसे आजकल बेलगाँव में सुरेबान कहा जाता है। यह स्थान बेर के वृक्षों के लिए आज भी प्रसिद्ध है। (दिए गए **मानचित्र-1** के 146 व 147 बिंदु)।

मलय पर्वत और चंदन-वनों को पार करते हुए वे ऋष्यमूक पर्वत की ओर बढ़े। यहाँ उन्होंने हनुमान और सुग्रीव से भेंट की, सीता के आभूषणों को देखा और श्रीराम ने बाली का वध किया।

ऋष्यमूक पर्वत तथा किष्किंधा नगर कर्नाटक के हम्पी, ज़िला बेल्लारी में स्थित हैं।

पंचम चरण – समुद्र तट

मलय पर्वत, चंदनवन, अनेक नदियों, झरनों तथा वन-वाटिकाओं को पार करके राम और उनकी सेना ने समुद्र की ओर प्रस्थान किया। श्रीराम ने पहले अपनी सेना को कोडीकरई में एकत्रित किया परन्तु उस स्थान के सर्वेक्षण के बाद इस स्थान को पुल बनाने के लिए उचित नहीं समझा गया। इसीलिए समस्त सेना को रामेश्वरम ले जाया गया। वाल्मीकि के अनुसार तीन दिन की खोजबीन के बाद श्रीराम ने समुद्र में वह स्थान ढूँढ़ निकाला जिस पर श्रीलंका पहुँचने के लिए पुल का निर्माण किया जा सकता था। छेदुकराई तथा रामेश्वरम के इर्दगिर्द इस घटना से संबंधित अनेकों स्मृतिचिह्न अभी भी मौजूद हैं। नाविक रामेश्वरम में धनुषकोटि नामक स्थान से यात्रियों को रामसेतु के अवशेषों को दिखाने ले जाते हैं किंतु स्थानीय लोग इसके ऐतिहासिक नाम 'रामसेतु' के बजाय इसे एडम्स ब्रिज के नाम से पुकारना अधिक फ़ैशनेबल समझते हैं। श्रीलंका सरकार इस डूबे हुए पुल (पम्बन से मन्नार) के ऊपर भूमार्ग का निर्माण कराना चाहती है, जबकि भारत सरकार नौवहन हेतु उसे तोड़ना चाहती है। इस कार्य को भारत सरकार ने सेतुसमुद्रम प्रोजेक्ट का नाम दिया है। श्रीलंका के ऊर्जा मंत्री श्री जयसूर्या ने इस डूबे हुए रामसेतु पर भारत और श्रीलंका के बीच भूमार्ग का निर्माण कराने का प्रस्ताव रखा था।

श्रीलंका के रामायण स्थल

श्रीलंका में नुआरा एलिया पहाड़ियों के आसपास स्थित रावण फॉल, रावण गुफाएँ, अशोक वाटिका, विभीषण महल आदि को देखकर, कोई व्यक्ति भी यह मानने को मजबूर हो जाएगा कि महर्षि वाल्मीकि श्रीलंका के इन स्थानों से भली भाँति परिचित थे। आजतक भी इन स्थानों की भौगोलिक विशेषताएँ, जीव, वनस्पति तथा स्मारक आदि बिल्कुल वैसे ही हैं जैसे

कि रामायण में वर्णित किये गये हैं। श्री वाल्मीकि जी ने रामायण की संरचना श्रीराम के राज्याभिषेक के बाद वर्ष 5075 ई.पू. के आसपास की होगी (1/4/1-2)। श्रुति स्मृति की प्रथा के माध्यम से पीढ़ी दर पीढ़ी परिचलित रहने के बाद वर्ष 1000 ई.पू. के आसपास इसको लिखित रूप दिया गया होगा, इस निष्कर्ष के बहुत से प्रमाण मिलते हैं। रामायण की कहानी के सन्दर्भ निम्नलिखित रूप में उपलब्ध हैं–

- कौटिल्य का अर्थशास्त्र (चौथी शताब्दी ई.पू.)
- बौद्ध साहित्य में दशरथ जातक (तीसरी शताब्दी ई.पू.)
- कौशाम्बी में खुदाई में मिलीं टेराकोटा (पक्की मिट्टी) की मूर्तियाँ (दूसरी शताब्दी ई.पू.)
- नागार्जुनकोंडा (आन्ध्रप्रदेश) में खुदाई में मिले स्टोन पैनल (तीसरी शताब्दी)
- नचार खेड़ा (हरियाणा) में मिले टैराकोटा पैनल (चौथी शताब्दी)
- श्रीलंका के प्रसिद्ध कवि कुमार दास की काव्य रचना 'जानकी हरण' (सातवी शताब्दी)

इन सब के अतिरिक्त भारत, श्रीलंका, तिब्बत, थाईलैंड, मलेशिया, कंबोडिया तथा इंडोनेशिया आदि देशों में हजारों ऐसे सबूत हैं जो रामायण की प्राचीनता व प्रमाणिकता को सिद्ध करते हैं। नेपाल में संरक्षित नेवाडी लिपि में वर्ष 1041 ई. में लिखी रामायण की पांडुलिपि शायद विश्व की सबसे पुरानी पांडुलिपि होगी।

रामायण में वर्णित स्थानों के पुरातात्त्विक व भूवैज्ञानिक प्रमाण

पिछले चालीस वर्षों में की गई पुरातात्त्विक छानबीन, भूवैज्ञानिक शोध तथा रिमोट सैंसिंग पर आधारित तथ्यों से इस बात का पुष्टिकरण होता है कि पिछले 10000 वर्षों से लगातार भारतीय उपमहाद्वीप में सभ्यता का निरन्तर विकास होता रहा है। इनमें बहुत से स्थान रामायण में उल्लिखित स्थानों के आसपास स्थित हैं, उदाहरणतः–

- इलाहाबाद जिले में, अर्थात् संगम स्थान के आसपास कोल्डिहवा, झूसी तथा हेटापट्टी में हुए पुरातात्त्विक उत्खननों से छः-सात हज़ार ई.पू. में प्रारम्भिक ग्रामीण सन्निवेष के महत्त्वपूर्ण प्रमाण मिले हैं। आनन्दभवन के सामने पार्क के नीचे हुई खुदाई में भारद्वाज आश्रम के कुछ ऐसे अवशेष मिले हैं जो रामायण में वर्णित संदर्भों से मिलते जुलते हैं।

- कोशल देश की राजधानी, अयोध्या में, न्यायालय के आदेशों के फलस्वरूप, दो बार हुए पुरातात्त्विक उत्खननों के फलस्वरूप अत्यन्त प्राचीन सभ्यता के सबूतों के साथ-साथ प्राचीन हिन्दू मन्दिरों के अवशेष भी मिले हैं। उत्तर प्रदेश के सन्त कबीर नगर जिले में स्थित लहुरादेवा से खुदाई में लगातार सात आवासीय स्तरों के प्रमाण मिले हैं जिनके आधार पर भारतवर्ष में 7000 वर्ष ई.पू. से निरन्तर सभ्यता व संस्कृति के विकास के विस्मयकारी साक्ष्यों का खुलासा हुआ हैं। यहाँ पर 5000 ई.पू. से भी पहले उगाये जाने वाले चावल, विभिन्न प्रकार के आभूषण, स्टीऐटाइट (सेलखड़ी) के मनके तथा ताँबें के तीरों की नोक जैसी वस्तुएँ भी खुदाई में मिले हैं (**चित्र 1, 2, 3 व 4**)।
- छत्तीसगढ़ के बस्तर जिले में दण्डक वन के बीचों बीच स्थित कोटुमसर की गुफाएँ, जिनके अस्तित्त्व की खोज 20 वर्ष पहले ही हुई है, रामायणकाल के बारे में बहुत कुछ बताती हैं।

रामायण में वर्णित स्थानों के आकार प्रकार व माहौल की निरंतरता

रामायण में वर्णित कुछ विशेष स्थानों का दौरा, पुरातत्त्वविदों व भूवैज्ञानिकों के सहयोग से, लेखिका ने भी किया। इनमें शामिल हैं-अयोध्या, इलाहाबाद मेंश्रृंगवेरपुर, अकबर के किले में स्थित विशाल अक्षयवट, आनन्द भवन के सामने भारद्वाज आश्रम, चित्रकूट, बस्तर जिले में कोटुमसर गुफाएँ, नासिक जिले में अगस्त्य आश्रम तथा पंचवटी, रामसेतु एवं श्रीलंका में स्थित कुछ महत्त्वपूर्ण स्थान। इन स्थानों का रंगरूप, आकार प्रकार जीव व वनस्पति आदि रामायण में दिये गये विवरणों से आज भी हूबहू मिलते जुलते हैं।

श्रृंगवेरपुर (सिंगरौर)

उत्तर प्रदेश के इलाहाबाद जिले में, गंगा नदी की बाईं ओर पुरातात्त्विक उत्खनन में मिला श्रृंगवेरपुर (सिंगरौर) का प्राचीन किला रामायण में वर्णित गुह निषाद के छोटे से राज्य की यादों को ताजा कर देता है (अयोध्याकांड, सर्ग-50 से 52)। यहाँ खुदाई में मिले अद्भुत जल टैंक परिसर में व्यापक व्यवस्था है गंगा के जल को चैनलों के माध्यम से किले में लाने की, वितरण के लिये नालियों का जाल, उफान के पानी का सिल्टिंग चैम्बर के माध्यम से एकत्रित करना तथा सीपेज से जल हानि को रोकने के लिये सतह के भीतर कुएँ, आदि (1993 की ए.एस.आई. रिपोर्ट)। यह प्राचीन जलटैंक 2000 वर्ष पुरानी इंजीनियरिंग का एक

बेहतरीन नमूना है तथा हम भारतीयों को इस पर गर्व होना चाहिए। इस खोज से इस बात के भी प्रमाण मिलते हैं कि शृंगवेरपुर अत्यंत प्राचीन नगर था एवं अयोध्याकाँड में वर्णित गुहनिषाद के राज्य की वास्तविकता को दर्शाता है।
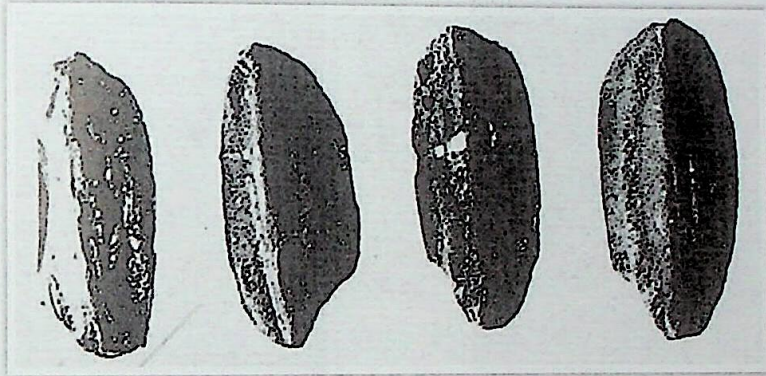
चित्र-1: लहुरादेवा से कृषि द्वारा उगाये गये चावल के साक्ष्य 7000 ई.पू. के।
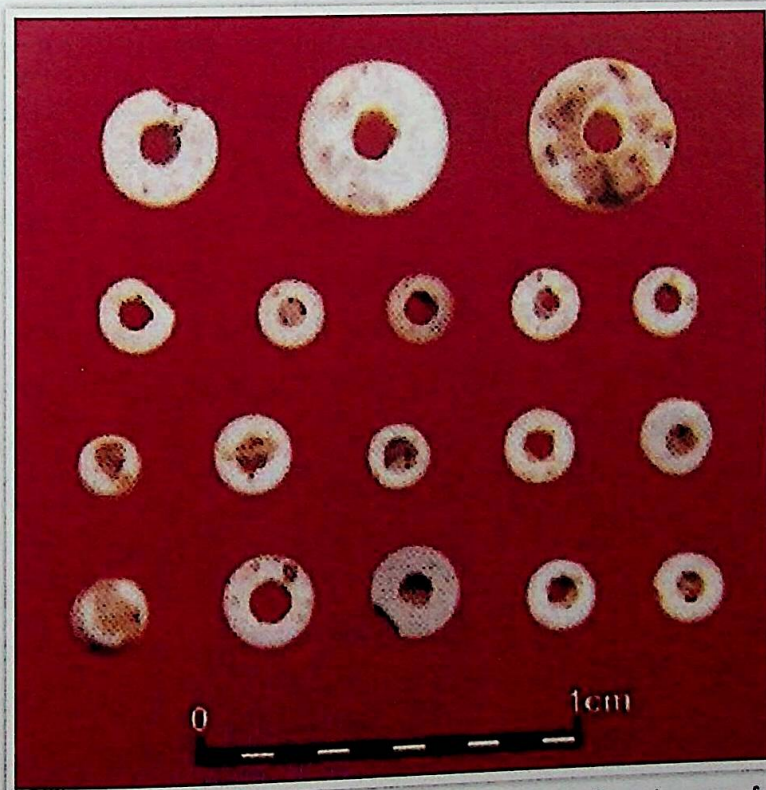
चित्र-2: लहुरादेवा से मिले सूक्ष्म एवं मध्यम आकार के सेलखड़ी के मनके, 7000 ई.पू. के।
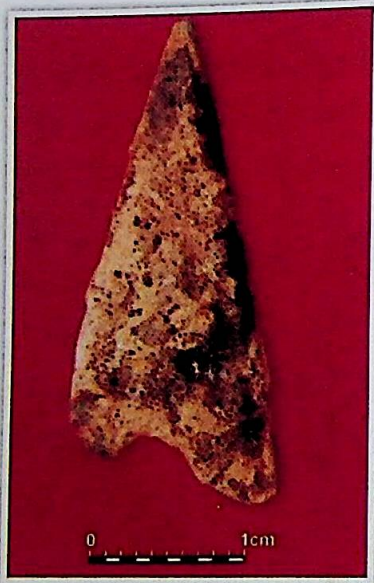
चित्र-3: लहुरादेवा से मिले ताँबे के वाणाग्र, 5000 ई.पू. के।
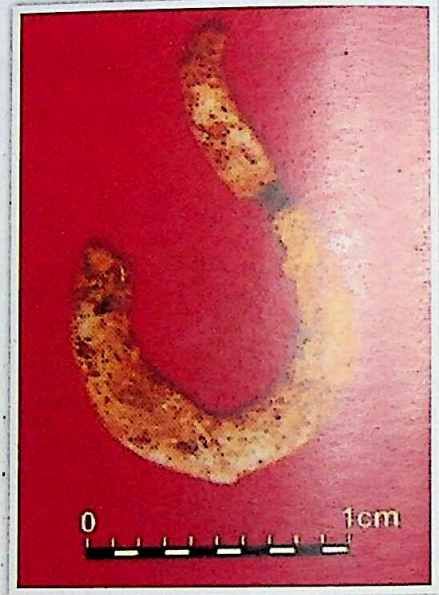
चित्र-4: लहुरादेवा से मिले टूटे हुये ताँबे की वस्तु 5000 ई.पू. की।

अक्षयवट और भारद्वाज आश्रम

इलाहाबाद में अकबर के किले के अन्दर स्थित अक्षयवट वृक्ष की जड़े भूमि के अन्दर कई मीटर नीचे तक है तथा सैंकड़ों मीटर चारों तरफ फैली हुई है जो कि हमें इस असाधारण वृक्ष के रामायण में वर्णित सन्दर्भों की याद दिलाती हैं (2/53/33, 2/54/1)। इससे भी अधिक दिलचस्प है भारद्वाज आश्रम का उत्खनन, जो कि आनन्द भवन के बिल्कुल सामने की तरफ स्थित है। यह स्थल लगभग उसी जगह पर स्थित है जहाँ रामायण में वर्णित है (2/54/8-13)। उत्खनन से रेतीली मिट्टी के जमाव के साथ उत्तरी कृष्णमार्जित पात्र परम्परा के ठीकरों एवं सरकण्डों के निशान वाले मिट्टी के टुकड़े इत्यादि प्राप्त हुए है जो कि झोपड़ीनुमा आवास की ओर इंगित करते हैं। वाल्मीकि रामायण में वर्णित भारद्वाज आश्रम के स्थान पर पुरातात्विक उपशेषों का मिलना महज संयोग नहीं है अपितु एक प्राचीन सभ्यता की निरन्तरता की ओर संकेत करता है।

चित्रकूट

चित्रकूट रामायण में एक अद्वितीय सौन्दर्य से भरपूर स्थान के रूप में वर्णित है जो कि गंगा की सहायक नदी मंदाकिनी के किनारे बसा है (2/94-95)। समृद्ध वनस्पतियों, जीव-जन्तुओं,

फल-फूलों की विविधता के अलावा वाल्मीकि जी ने चित्रकूट के सुन्दर झरनों, गुफाओं व फव्वारे का अत्यन्त दिलचस्प वर्णन किया है। चित्रकूट की एक यात्रा वाल्मीकि द्वारा बताई एक-एक सुन्दरता की याद ताज़ा कर देगी वैसे ही सुन्दर झरने तथा फव्वारे, प्राचीन गुफाओं में अभी भी रहते साधुसन्त, फल व फूलों से लदे कामदगिरी पर गाते चहकते सुन्दर पक्षी आदि। रामायण में वर्णित इस स्थल पर पुरातात्विक सर्वेक्षण (सेक्शन के तराशनें पर) काले रंग से लेपित (ब्लैक स्लिप्ड वेअर) एवं उत्तरी कृष्ण मार्जित (एन.बी.पी.) पात्र परम्परा के ठीकरे प्राप्त हुए है, जो कि इस स्थल की प्राचीनता को दर्शाते है।

दण्डक वन में कोटुमसर की गुफाएँ

रामायण में दण्डक वन के घने जंगलों, गुफाओं, बगीचों तथा ऋषियों के आश्रमों के कई संदर्भ हैं जहाँ श्रीराम अपने वनवास के दौरान बहुत बार आते जाते रहे। (3/7-10 सर्ग) उदाहरण के लिए कोटुमसर (कोटीमहेश्वर) की गुफाएँ जो कि दण्डक वन के घने जंगलों के बीच बस्तर जिले में स्थित हैं। इनकी खोज पहली बार सन 1985 में हुई थी लेकिन पहाड़ के ऊपरीभाग से इनमें प्रवेश का मार्ग 1993 में ही खुल सका। इन गुफाओं के अन्दर से मिले कुछ जले हुये अनाज के दानों व बीजों की रेडियो कार्बन तिथियाँ 6940-4030 वर्ष पूर्व के समयकाल को प्रदर्शित करती हैं। इन गुफाओं के अन्दर ही पानी के कुएँ हैं। लेखिका द्वारा लिये गये चित्रों (**चित्र संख्या 5 व 6**) से रामायण में वर्णित विवरणों का सहसंबन्ध स्पष्ट होता है।

नासिक

रामायण में गोदावरी नदी के पास स्थित अगस्त्यमुनी के आश्रम के इर्द-गिर्द स्थित तालाबों व आसपास बागीचों के अतिरिक्त अगस्त्यमुनी की अग्निशाला का सजीव वर्णन है जिसमें कई प्रकार के हथियारों इत्यादि का निर्माण किया जाता था (3/11-12)। यहाँ अगस्त्यमुनी जी ने श्रीराम को कई महत्त्वपूर्ण हथियार जैसे दिव्य धनुष, अमोघ बाण, विभिन्न प्रकार के तीर और एक तलवार दिये जिनसे श्रीराम उन क्रूर राक्षसों का वध करने में सक्षम हो सकें। अगस्त्य आश्रम की जगह एवं अगस्त्यमुनी के मंदिर के अवशेष वहाँ के लोकल निवासियों द्वारा आज भी नासिक के अंकाई-पिपलनेर क्षेत्र में पहचाने गये हैं। एक प्रख्यात खगोल शास्त्री श्री अशोक भटनागर, ने प्लैनेटेरियम सॉफ्टवेयर के माध्यम से दर्शाया कि अगस्त्य तारा (Canopus star) विंध्य पर्वत्त से वर्ष 5100 ई.पू. के लगभग पहली बार दिखाई दिया।
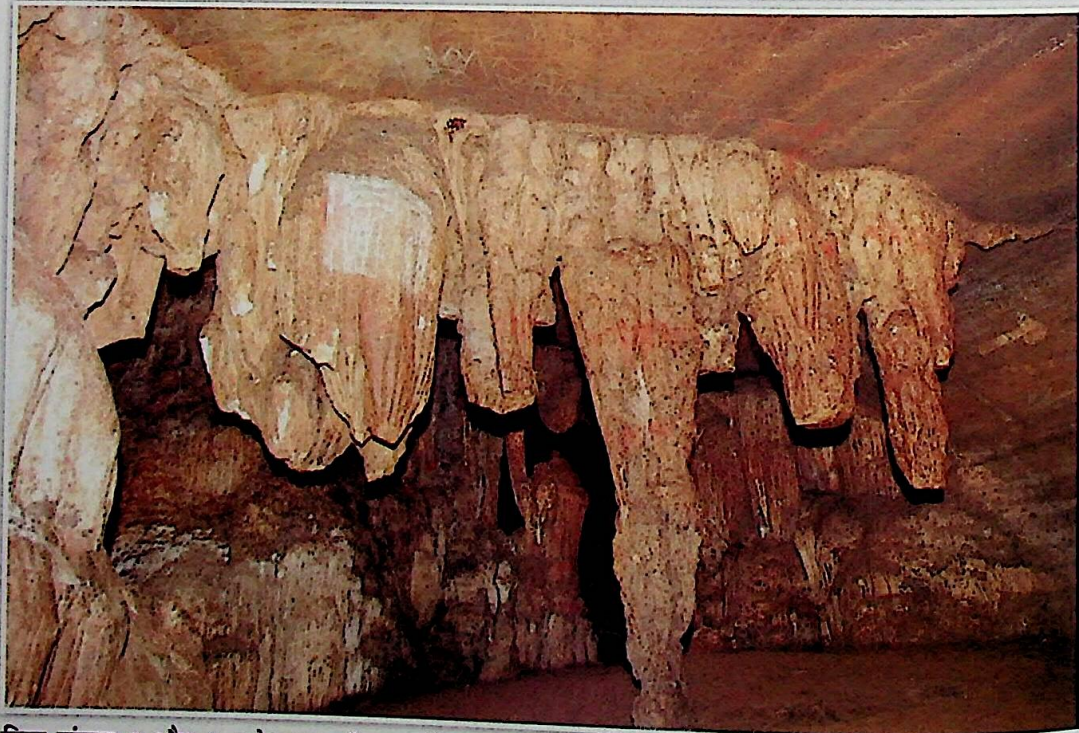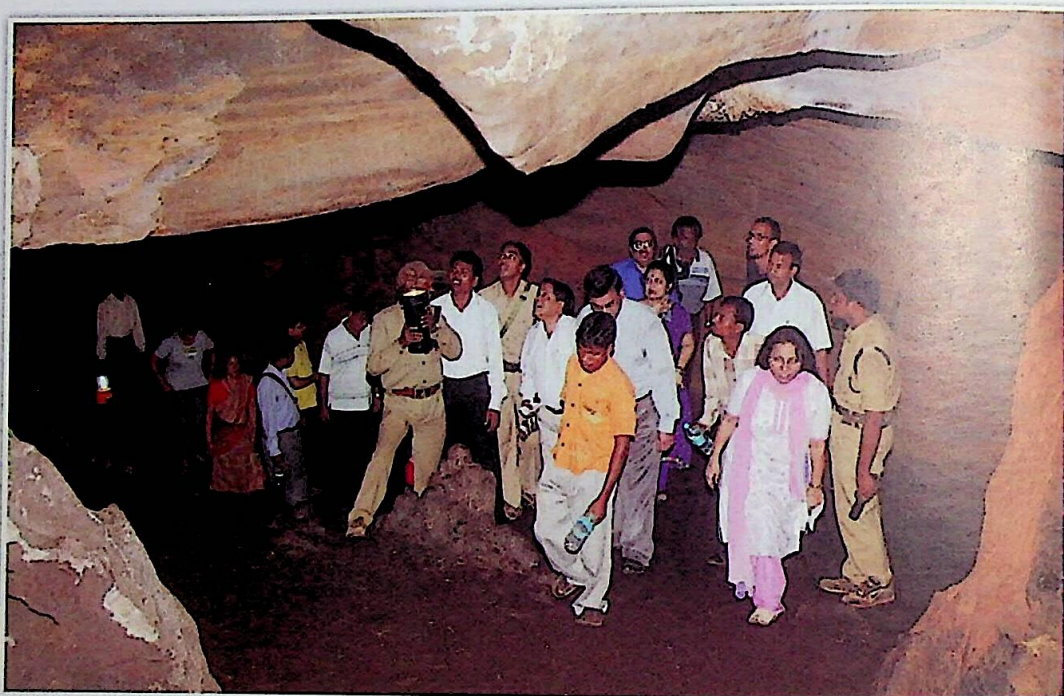
चित्र संख्या 5 और 6: कोटुमसर की गुफाओं का आन्तरिक दृष्य।

आश्चर्य होता है कि पुराणों में दिये गये अगस्त्य मुनी के संदर्भ की तिथि भी रामायण में दिये गये सन्दर्भों की तिथियों का समर्थन करती हैं क्योंकि दोनों का समय 5100 ई.पू. के आस-पास आता है।

रामसेतु

रामेश्वरम् की यात्रा के दौरान लेखिका को समुद्र में जलमग्न रामसेतु के एक छोटे से भाग की गहराई मापने का एक असाधारण अवसर मिला। मछुआरे के चप्पु (नाँव चलानें वाला उपकरण) से मापने पर पता चला कि यह रामसेतु वर्तमान जलस्तर से 9.5 फीट नीचे है तथा स्नॉरक्लिंग (पानी के अन्दर देखने के लिये आँखों पर लगाने वाला चश्में जैसा उपकरण) के माध्यम से देखने के बाद सेतु के इस भाग में पत्थर जोड़ने और चिन्हित सीमाओं के बनाने में मानव हाथ के योगदान का साफ संकेत मिला। सेतु के इस छोटे से हिस्से की तस्वीर संलग्न है **(चित्र संख्या 7 और 8)**।

चित्र संख्या 7 और 8: रस्सीयों जैसी दिखने वाली सेतु सीमाएँ और बीच में भरे हुये पत्थर मानव योगदान का संकेत देते हैं।

श्रीलंका में स्थित स्थान

वाल्मीकीय-रामायण में मध्य लंका की ऊँची पहाड़ियों के बीचों बीच सुरंगों तथा गुफाओं के भँवरजाल का संदर्भ है। इन पहाड़ियों की ऊँचाई केरल के मलयगिरि पर्वतों के लगभग बराबर है (5/1/204)। श्रीलंका में 'नुवारा एलिया' पहाड़ियों से लगभग 90 किलोमीटर दूर बान्द्रवेला की तरफ इस व्याख्यान से बिल्कुल मिलती जुलती पहाड़ियाँ तथा उनके भीतर गुफाओं व सुरंगों का फैला हुआ भँवरजाल देखने का अवसर लेखिका को मिला। पहाड़ी की चोटी पर समतल स्थान (**9क**), 3500 फुट की ऊँचाई पर रावण फॉल, (**9ग**), 4500 फुट की ऊँचाई पर रावण गुफाएँ (**9ख**) तथा पिछली तरफ उदाकिरिंदा गुफाएँ (**9घ**)। स्थानीय लोगों ने बताया कि पहाड़ी के चारों ओर से भीतर जाती ये गुफाएँ एक खुले स्थान

चित्र 9क: गुफाओं के समूह के साथ बान्द्रवेला के निकट स्थित पर्वत का उपरी भाग
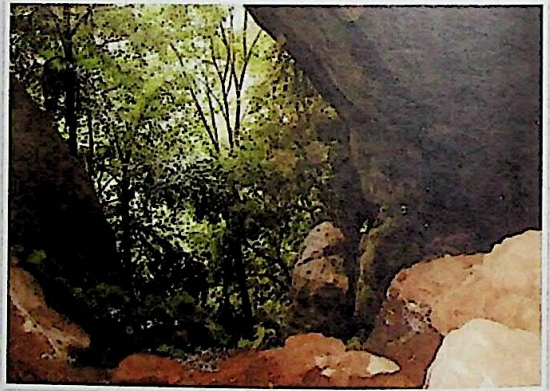
चित्र 9ख: रावण गुफाएँ
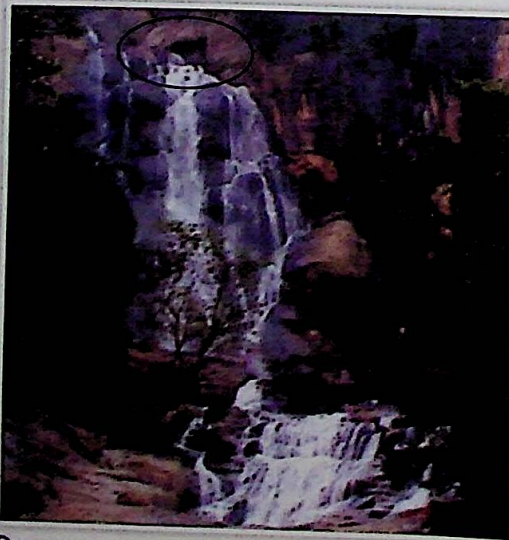
चित्र 9ग: रावण फॉल

चित्र 9घ: उदाकिरिंदा गुफाएँ

पर मिलती हैं, परन्तु लेखिका के लिये उस स्थान तक पहुँचना असंभव था क्योंकि गुफाएँ जालों, चमगादड़ों, कीड़े-मकोडों व रेंगने वाले जानवरों से भरी हुई थीं। नुवारा एलिया में अशोक वाटिका में घूमकर रामायण में वर्णित अनेक संदर्भों की यादें ताजा हो गईं। श्रीलंका के लोगों ने विभीषण के राज्याभिषेक वाला विभीषण महल भी संरक्षित कर रखा है, परन्तु बहुत शीघ्र यह स्थान बौद्ध स्थल में परिवर्तित हो जायेगा और रामायण के साथ इसका सम्बन्ध जनस्मृति से मिट जाएगा। यदि रामायण की कहानी केवल कल्पना मात्र होती तो श्रीलंका में उसके संदर्भों से हूबहू मिलते जुलते स्थान, पर्वत, गुफाएँ, वाटिका तथा महल क्यों मिलते?

रामसेतु के उपग्रह चित्र व समुद्र विज्ञान से प्राप्त साक्ष्य

वाल्मीकीय-रामायण में यह अभिलिखित है कि श्रीराम की सेना ने रामेश्वरम और श्रीलंका के बीच समुद्र पर एक सेतु का निर्माण किया था। इस सेतु को पार करके श्रीराम की सेना श्रीलंका पहुंची, रावण का वध किया और सीता को रावण की कैद से मुक्त करवाया। इस बात का संदर्भ भी है कि पहले श्रीराम की सेना कोडीकराई में ठहरी परंतु सेतु निर्माण के लिए उस स्थान को उपयुक्त नहीं पाया गया। अतः पूरी सेना को रामेश्वरम की ओर स्थानांतरित कर दिया गया । श्रीरामजी ने समुद्र पर पुल बाँधने के लिए तीन दिनों तक उपयुक्त स्थान की खोज की। अंततः ऐसा उपयुक्त स्थान ढूंढ लिया गया जहाँ जल कम गहरा था। श्री नल एक प्रसिद्ध शिल्पकार थे, उन्हें पुल निर्माण में विश्वकर्मा जैसी ही विशेषज्ञता हासिल थी, इसलिए श्रीराम ने पुल के निर्माण हेतु उनसे निवेदन किया (6/22/45-53)।

नल ने काफी खोज-बीन करने के पश्चात, घोषित किया कि निर्धारित समुद्री रास्ते पर सेतु का निर्माण संभव है । श्रीराम की सेना ने ताड़, नारियल, आम, अशोक, बबूल, अर्जुन इत्यादि वृक्षों को उखाड़ने के लिए विभिन्न औजारों का उपयोग किया और विविध उपकरणों की सहायता से इन वृक्षों, पत्थरों एवं चट्टानों को समुद्र तट तक पहुंचाया (6/22/56-60)। शिल्पकार नल ने सैनिकों को दोनों ओर लम्बी रस्सियों के साथ खड़े रहने का निर्देश दिया तथा छोटे-छोटे द्वीपों, बरेतियों व चट्टानों के बीच की खाली जगह को लताओं, वृक्षों, पत्थरों और चट्टानों से भरकर पाँच दिन में पुल बांध दिया (6/22/62-73)। इस प्रकार प्राकृतिक द्वीपों, चट्टानों और बरेतियों की श्रृंखलाओं को जोड़कर ही रामसेतु का निर्माण पाँच दिनों में पूर्ण किया गया।

उपग्रह चित्र

कुछ वर्ष पहले नासा (NASA) ने अपने वेबसाइट पर एक सेतु के वो अवशेष दिखाए थे, जो पॉक स्ट्रेट में समुद्र के भीतर रामेश्वरम् में धनुषकोटि से लंका में मन्नार तक 30 किलोमीटर लम्बे रास्ते में पड़े थे। यह सेतु बिल्कुल उसी स्थान पर स्थित है जहाँ पर रामसेतु के निर्माण का वर्णन वाल्मीकीय-रामायण में किया गया है तथा इसका आकार, प्रकार व बनावट भी रामायण में दिये गये तथ्यों से बिल्कुल मिलते हैं। नासा चित्र के साथ-साथ गूगल से डाउनलोड किया चित्र संलग्न है (**चित्र-10**)।

समुद्र वैज्ञानिकों द्वारा तैयार की गई समुद्र स्तर रेखा चित्र

पिछले 7000 वर्षों से रामसेतु का भूमार्ग के रूप में उपयोग समुद्र के स्तर में उतार चढ़ाव पर निर्भर करता रहा है। गोवा के राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान (एन.आई.ओ.), में भू-वैज्ञानिक, समुद्र विज्ञान विभाग की पुराजलवायु परियोजना के अध्यक्ष और वरिष्ठ वैज्ञानिक डॉ. राजीव निगम ने पिछले **'पंद्रह हजार वर्षों के दौरान समुद्र की सतह में आये उतार-चढ़ाव और इसके किनारे बसी मानव बस्तियों पर इनके प्रभाव'** पर प्रकाश डाला है। उन्होंने विस्तार से बताया है कि समुद्र में जलस्तर के उतार-चढ़ाव के बारे में समुद्र विज्ञान की रिपोर्टों से 7500 ई.पू. और उसके बाद से जलमग्न हुए या तत्पश्चात् भूमि से घिरे कई तटवर्त्ती पुरातात्त्विक स्थलों के अस्तित्व का पता चलता है। डॉ. निगम ने पूर्वी तट पर समुद्र के उतार-चढ़ाव पर एक बहुत महत्वपूर्ण रेखा चित्र (चित्र संख्या-11) दिखाया और बताया कि समुद्र का स्तर 7000-7200 वर्ष पूर्व (5000-5200 ई.पू.) के आसपास मौजूदा स्तर से लगभग 3 मीटर नीचे था। राम के युग की खगोलीय तिथि 7100 वर्ष पूर्व के आस पास है (राम की जन्म तिथि 10 जनवरी, 5114 ई.पू.) और वर्तमान में रामसेतु लगभग 3 मीटर नीचे पानी में डूबा है। इसका अर्थ हुआ कि 5100 ई.पू. में यह सेतु समुद्र की सतह पर था और इसका इस्तेमाल रामेश्वरम् तथा श्रीलंका के बीच भू-मार्ग के रूप में किया जा सकता था। इस प्रकार समुद्र के उतार-चढ़ाव पर किए गए इस अध्ययन से रामायण युग के खगोलीय काल-निर्धारण की पुष्टि हुई है (**चित्र-11**)।
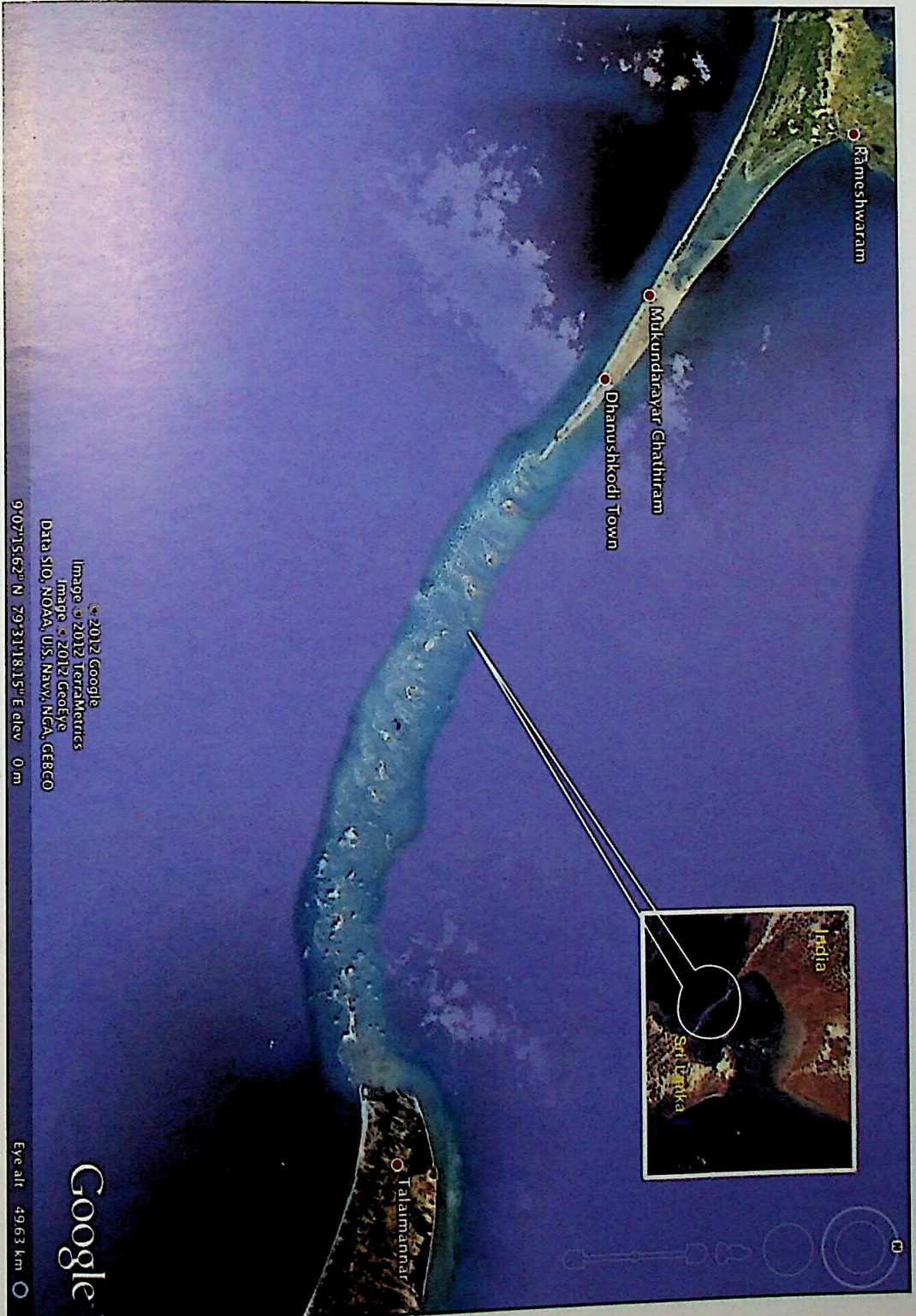
चित्र 10: नासा की पिक्चर के साथ गूगल से डाउनलोड किया हुआ रामसेतु का चित्र
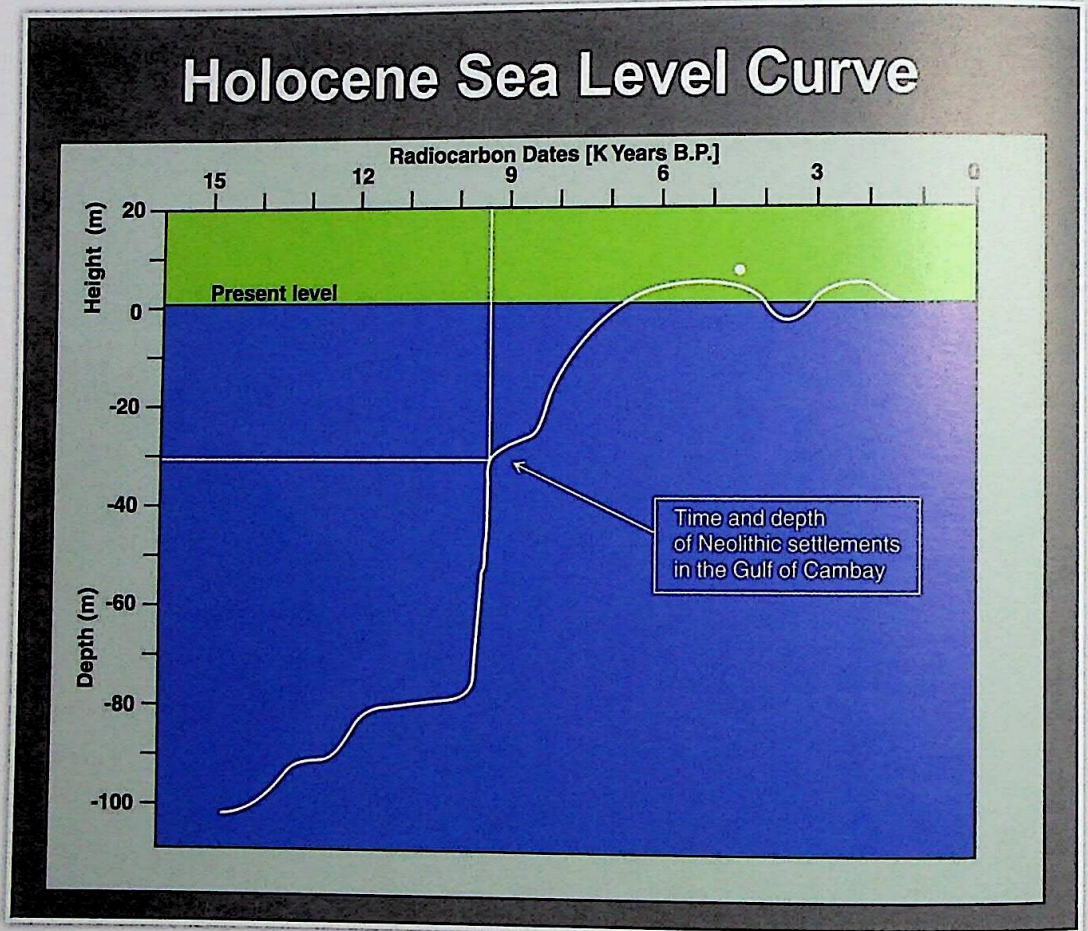
चित्र 11: नूतनयुग का समुद्र स्तर रेखा चित्र

समुद्र स्तर के रेखा चित्र द्वारा रामायण के अन्य संदर्भों की पुष्टि

यह समुद्र स्तर रेखा चित्र रामायण में वर्णित एक और महत्त्वपूर्ण तथ्य की पुष्टि करता है। वाल्मीकि जी ने श्लोक 6/19/31 तथा 6/22/50 में कहा है कि समुद्र के जल की मात्रा में संवर्धन श्री राम के पूर्वजों, विशेषकर सगर व भागीरथ, द्वारा किया गया। सगर सूर्यवंश के चालीसवें सम्राट थे जबकि श्रीराम चौसठवें राजा थे। यदि एक राजा का औसतन राज्यकाल 40 वर्ष भी लिया जाये तो 900-1000 साल की अवधि निकलती है। **चित्र-11** में देखें कैसे 8000 से 7000 वर्ष पूर्व (6000 ई.पू. से 5000 ई.पू.) के बीच में समुद्र का स्तर अत्यधिक तेजी से ऊपर चढ़ा। यही नहीं, रामायण में महाराजा सगर से सम्राट भागीरथ तक श्रीराम के पूर्वजों द्वारा गंगा के पानी को उसके स्रोत अर्थात् शिवलिंग चोटी के ग्लेशियरों से बंगाल की खाड़ी (गंगा सागर) तक पहुँचाने के लिये किये गये अभूतपूर्व प्रयासों का ग्राफिक विवरण

दिया गया है (1/39-45)। इन्हीं प्रयासों के फलस्वरूप श्रीराम के पूर्वजों ने उत्तर-पश्चिमी भारत को बाढ़ से बचाया तथा उत्तर पूर्वी भारत को गंभीर सूखे से राहत पहुँचाई।

समुद्र-स्तर रेखा चित्र यह भी दर्शाता है कि रामसेतु बनने के लगभग 200 वर्ष के भीतर ही समुद्र का जलस्तर लगभग 3 मीटर ऊपर चढ़ गया, जिसके परिणाम स्वरूप अगले 3000 वर्षों तक, अर्थात् वर्ष 2000 ई.पू. तक, रामसेतु समुद्र में जलमग्न रहा। इसके बाद समुद्र का जलस्तर नीचे गिरा। 4000 वर्ष पूर्व से 3000 वर्ष पूर्व (2000 ई.पू. से 1000 ई.पू.) के मध्यकाल में लगभग 500-600 वर्ष तक यह सेतु फिर समुद्र स्तर से ऊपर रहा। इन तथ्यों की पुष्टि भूवैज्ञानिक रिपोर्टों तथा उपग्रह चित्रों ने भी की है जिनके अनुसार विशाल सरस्वती नदी वर्ष 6000 ई.पू. से लगभग 4000 ई.पू. तक हिमालय से कच्छ के रण तक पूर्ण महिमा के साथ बहती थी परन्तु वर्ष 2500-1500 ई.पू. में शुष्क चरण की शुरुआत, भूगर्भीय हलचलों की वजह से सहायक नदियों से नाता टूटने तथा पुरापर्यावरणीय परिवर्तनों के कारण, इसके जलस्तर में काफी कमी आई। इन कारणों से उत्तर-पश्चिमी भारत में सूखे जैसी स्थिति रही, जिसके फलस्वरूप समुद्र का जलस्तर नीचे गिरा।

पृथ्वी विज्ञान विभाग की रिपोर्ट

भारतीय भूविज्ञान सर्वेक्षण के पूर्व निदेशक डॉ. बद्रीनारायण के अधीन सेतुसमुद्रम शिपिंग चैनल प्रौजेक्ट (SSCP) के भूवैज्ञानिक पहलुओं का अध्ययन किया गया। उनकी रिपोर्ट के अनुसार रामसेतु एक प्राकृतिक संरचना है, जिसकी ऊपरी सतह मानव निर्मित प्रतीत होती है क्योंकि समुद्री रेत के बीचों बीच कोरल, बलुआ, पत्थर आदि का संयोजन है। यह सर्वविदित है कि कोरल साधारणतः पानी के ऊपर तैरते हैं। भारत के पूर्व राष्ट्रपति महामहिम डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम जी के पत्र के उत्तर में पृथ्वी विज्ञान विभाग ने लिखा, ''एडमब्रिज क्षेत्र में देखा गया कि कोरल की संरचनायें 1 से.मी. से 2.5 से.मी. लम्बी हैं जो समुद्री रेत के बीचों बीच पड़ी पाई गई हैं। इनमें कोरल के अधिकतर टुकड़े गोलाकार कंकड़ों की तरह हैं जिससे ऐसा आभास होता है कि इन को किसी और जगह से लाकर यहाँ बिछाया गया। इसी क्षेत्र में कुछ ऐसी 'टैरी-फार्मेशन मिलीं जिनमें मध्यपाषाणिक (Mesolithic) तथा लघुपाषाणिक (Microlithic) उपकरण (Tools) भी मिले जो इस बात को दर्शातें हैं कि 8000 वर्ष से 4000 वर्ष के बीच यहाँ मज़बूत मानव उपस्थिति व गतिविधि रही होगी। इस प्रकार यह रिपोर्ट भी रामायणकाल की खगोलीय तिथि का समर्थन करती है (सन्दर्भः सुब्रमण्यन स्वामी, 2008)।

नेशनल रिमोटसेंसिंग एजेंसी की रिपोर्ट

भारत के अंतरिक्ष मंत्रालय की नेशनल रिमोट सेंसिंग एजेंसी ने अपने उपग्रह चित्रों का संकलन कर किताब प्रकाशित की (ISBN:8175256524)। जिसमें कहा गया है कि पुरातात्त्विक अध्ययन दर्शाते हैं कि रामसेतु बनने में मानव हाथ का योगदान भी था (सन्दर्भ: सुब्रमण्यन स्वामी, 2008, पृष्ठ 67)। इसलिये आवश्यकता इस बात की है कि हम अपने सुदूर भविष्य में हमारे पूर्वजों की उपलब्धियों को नकारने की बजाये उन पर गर्व महसूस करें।

अन्य रोचक तथ्य

सेतुसमुद्रम परियोजना के अधीन रामसेतु को तोड़कर शिपिंग मार्ग बनाने के सभी प्रयास अब तक विफल रहे हैं। डॉ. सुब्रमण्यन स्वामी ने अपनी पुस्तक RAM SETU में The Asian Age की 23 जनवरी, 2007 की रिपोर्ट का सार देते हुए लिखा कि ड्रैजिंग कार्पोरेशन ऑफ इंडिया (DCI) का ड्रैजर रामसेतु पर कार्य शुरू करने के बाद टूट गया और उसके दोनों टुकड़े समुद्र में डूब गये। इस ड्रैजर को निकालने के लिये इसी कार्पोरेशन की जो क्रेन (Crane) वहाँ पहुँची, वो भी टूटफूट कर समुद्र में डूब गई। रूस का विशेषज्ञ जब निरीक्षण के लिये वहाँ पहुँचा तो उसकी टाँग टूट गई। फलस्वरूप रामसेतु के रहे सहे अवशेषों को समाप्त करने के जो भी प्रयत्न सरकार ने अबतक किये है वो सब विफल रहे और सेतुसमुद्रम् शिपिंग मार्ग नहीं बन पाया।

कुछ वर्ष पहले रामेश्वरम् से, विशेषकर धनुषकोटि से, नाविक (Boatmen) दर्शकों को काँच के तले वाली नावों (Glass Boats) में बैठाकर रामसेतु के अवशेष दिखाने ले जाते थे परन्तु अब इन नावों को वहाँ से हटा लिया गया है। रामसेतु को ऐडम ब्रिज कहने का भी मानों फैशन हो गया है, शायद इस लिये कि अभिव्यक्ति 'ऐडम' अभिव्यक्ति 'राम' की तुलना में अधिक धर्मनिरपेक्ष अथवा ब्रिटिश मानी जाती होगी। श्रीलंका सरकार जलमग्न रामसेतु के ऊपर भूमार्ग का निर्माण करना चाहती थी जबकि भारत सरकार इसका विस्फोट कर शिपिंग मार्ग बनाना चाहती थी। ऐसी बहुत सी मल्टी नेशनल कम्पनियाँ हैं जो बी. ओ. टी. (Build-Operate-Transfer अर्थात् निर्माण-परिचालन-अन्तरण) स्कीम के अधीन रामसेतु पर भूमार्ग बनाने की पेशकश कर रही हैं। ज़रा परिकल्पना तो करके देखें कि पुनर्निर्मित

रामसेतु पर हर वर्ष कितने लाखों-करोड़ों भारतीय चलने के लिये पहुँचेंगे और कितना लाभ भारत और श्रीलंका की सरकारें तथा बिल्डर्स अर्जित कर सकेंगे।

श्री राम के पूर्वज

पुराणों तथा वाल्मीकीय-रामायण में दिये गये विवरणों के आधार पर इतिहासकारों ने यह दर्ज किया है कि श्रीराम सूर्यवंशी थे और वे इस वंश के 64वें राजा थे। पूर्व 63 राजाओं के नाम तथा विवरण 'अयोध्या का इतिहास' नामक पुस्तक में दिए गए हैं। यह पुस्तक लगभग 80 साल पूर्व रायबहादुर सीताराम जी द्वारा लिखी गई थी। वास्तव में श्रीराम तथा राजा जनक के पूर्वजों का विस्तारपूर्वक वर्णन वाल्मीकीय रामायण में भी है जो श्री विश्वामित्र तथा राजा जनक द्वारा विवाह सम्पन्न करने से पहले किया गया था (1/70-71)। लुज़ियाना यूनीवर्सिटी, अमेरिका के प्रो. सुभाष काक ने अपनी पुस्तक 'द एस्ट्रोनॉमिकल कोड ऑफ़ ऋग्वेद' में श्रीराम के उन 63 पूर्वजों का वर्णन किया है जिन्होंने अयोध्या पर राज्य किया। रामजी के पूर्वजों का विवरण इस प्रकार है:-

श्रीराम, सुपुत्र दशरथ, सुपुत्र अज, सुपुत्र रघु, सुपुत्र दीर्घबाहू, सुपुत्र दिलीप द्वितीय, सुपुत्र राजा विश्वासह सभी 63 नाम दिए गए हैं। ....राजा सगर (40वें शासक) .... सत्यवादी हरिशचन्द्र (33वें राजा)........ ।

प्रोफ़ेसर सुभाष काक ने श्रीराम के 29 अग्रजों का वर्णन भी किया है जिनमें उनके पुत्र कुश, पौत्र अतिथि तथा निषाध, नल आदि अन्य वंशज शामिल हैं, श्रीराम के 63 पूर्वजों तथा 30 अग्रजों की सूची निम्नानुसार है-

श्रीराम जो सूर्यवंश के 64वें शासक थे, उनके पूर्वज और अग्रजों की सूची निम्नानुसार है:

1.	मनु	33.	हरिश्चंद्र	65.	कुश
2.	इक्ष्वाकु	34.	रोहित	66.	अतिथि
3.	विकुक्शी-शषाद	35.	हरित, केनकु	67.	निषाध
4.	ककुत्स्थ	36.	विजय	68.	नल
5.	अनेनस	37.	रूरुक	69.	नभस
6.	पृथु	38.	वृक	70.	पुंडरीक
7.	विश्वरास्व	39.	बाहु	71.	क्षेमधन्वन
8.	आर्द्र	40.	सगर	72.	देवानीक
9.	युवनाष्व (प्रथम)	41.	असमंजस	73.	अहीनगु
10.	श्रावस्त	42.	अंशुमान	74.	परिपात्र
11.	वृहदष्व	43.	दिलीप (प्रथम)	75.	बाला
12.	कुवलष्व	44.	भगीरथ	76.	उकथ
13.	दृधाष्व	45.	श्रुत	77.	वज्रनाभ
14.	प्रमोद	46.	नाभाग	78.	षंखन
15.	हर्यष्व (प्रथम)	47.	अंबरीश	79.	व्युशिताष्व
16.	निकुंभ	48.	सिंधुद्विप	80.	विश्वसह (द्वितीय)
17.	संहताष्व	49.	अयुतायुस	81.	हिरण्यनाभ
18.	अकृषाश्व	50.	ऋतपर्ण	82.	पुश्य
19.	प्रसेनजित	51.	सर्वकाम	83.	ध्रुवसंधि
20.	युवनाष्व (द्वितीय)	52.	सुदास	84.	सुदर्शन
21.	मांधातृ	53.	मित्राशा	85.	अग्निवर्ण
22.	पुरूकुत्स	54.	अष्मक	86.	शीघ्र
23.	त्रसदस्यु	55.	मूलक	87.	मरू
24.	संभूत	56.	सतरथ	88.	प्रसुश्रुत
25.	अनरण्य	57.	अदिविद	89.	सुसंधि
26.	त्राशदष्व	58.	विश्वसह (प्रथम)	90.	अमर्श
27.	हर्यष्व (द्वितीय)	59.	दिलीप (द्वितीय)	91.	महाष्वत
28.	वसुमाता	60.	दीर्घबाहु	92.	विश्रुतवंत
29.	तृधन्वन	61.	रघु	93.	बृहदबाला
30.	त्रैयारूण	62.	अज	94.	बृहतक्शय
31.	त्रिशंकु	63.	दशरथ		
32.	सत्यव्रत	64.	राम		

यह जान लेने के बाद कि श्रीराम का समय लगभग 5100 ई.पू. है और उनसे पहले 63 सूर्यवंशी राजा उनके पूर्वज थे, तो पहले दो राजाओं मनु व इक्षवाकू का समय कम से कम 2000 वर्ष पीछे चला जाता है। यहाँ यह सुस्पष्ट ही है कि कृषि व सिंचाई, व्यापार व उद्योग, परिवहन व जहाजरानी, नगरों व नगर प्रबन्धन आदि में 2000 वर्ष तक जो स्वाभाविक विकास होता रहा उसी से बड़े साम्राज्य अस्तित्त्व में आये और श्रीराम कल्याण का वह उदाहरण पेश कर पाये जिसे आज तक रामराज्य के रूप में करोड़ों भारतीय प्रेमपूर्वक याद करते हैं। 12000 वर्ष पहले नूतन युग के प्रारम्भ के बाद सभ्यता के निरन्तर विकास की श्रृंखला में वेदों तथा महाकाव्यों से विदित होने वाले बुद्धिमत्ता, विद्वत्ता तथा विज्ञान के स्तर तक पहुँचने में कुछ हज़ार वर्ष लग जाना स्वाभाविक ही था।

विश्वभर में हुए लगभग सभी जीनोम अध्ययनों ने भारतीय उपमहाद्वीप के लोगों के आनुवंशिक प्रोफाइल का इस वंशावली के साथ अद्भुत सह-संबंध स्थापित किया है। कैनेथ ए. आर. कैनेडी, कैवेली स्फोर्जा व अन्य आनुवंशिक अध्ययन करने वाले विशेषज्ञों ने अपनी पुस्तकों तथा रिपोर्टों में बताया है कि भारतीय उपमहाद्वीप के लोगों का आनुवंशिक प्रोफाइल पिछले 55000 वर्षों से निरन्तर वही तथा अपरिवर्तित रहा है। उन्होंने ये भी निष्कर्ष निकाला है कि पिछले 11000 वर्षों से यह जीन (आनुवंशिक रूप) ऐसे सभ्य व्यक्तियों का है जिन्होंने पका हुआ खाना तथा संरचित भाषा बोलना शुरू कर दिया था। उन्होंने यह भी निष्कर्ष निकाला है कि सभी भारतीयों, जिनमें उत्तर भारतीय, द्राविड़ियन तथा जनजातियाँ शामिल हैं, का आनुवंशिक प्रोफाइल भी एक सा ही है तथा मध्य/पश्चिम एशिया अथवा यूरोप से किसी आर्य लोगों के कभी भारत में आने के कोई विश्वसनीय सबूत नहीं है। इस तरह जीनोम अध्ययन, रामायण में वर्णित वंशावली की पुष्टि करने के साथ-साथ राम के समय की खगोलीय तिथियों की सत्यता को भी प्रमाणित करते है।

सार

कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक और बंगाल से गुजरात तक हर जगह भारतीय लोग श्रीराम के अस्तित्व की वास्तविकता में विश्वास रखते हैं। हमारे उत्सव तथा त्यौहार अधिकतम श्रीराम के जीवन की घटनाओं पर आधारित हैं। रामायण में वर्णित स्थान एवं घटनाएँ हमारी प्राचीन समृद्ध विरासत का प्रतिनिधित्व करते हैं जो कि वैदिक काल से विकसित होते होते और भी समृद्ध होती चली गई।

श्रीराम की कहानी, यदि इसे अपने सम्पूर्ण परिपेक्ष्य में देखा जाए, तो यह भारत के एकीकरण में सबसे बड़े कारक के रूप में उभर कर आती है एवं हमारे समक्ष ऐसे आदर्शों की स्थापना करती है जिनका अनुकरण करने की हमें आज भी आवश्यकता है। एक आदर्श पुत्र, एक आदर्श भाई, एक आदर्श योद्धा और एक आदर्श राजा के रूप में श्रीराम का अद्वितीय स्थान है, यही कारण है कि उनको मर्यादा पुरुषोत्तम राम के नाम से जाना जाता है। वह एक उत्कृष्ट राष्ट्रवादी थे जो अपना राजपाट छोड़कर छोटे राजाओं की सहायता में जुट गए जिनके छोटे-छोटे राज्यों को श्रीलंका का दुष्ट राजा रावण और उसके रिश्तेदार, खरदूषण, त्रिशिरा और मारीच आदि हथियाने में लगे हुए थे।

श्रीराम ने भारत के कोने-कोने में घूमकर पिछड़ी जनजातियों व अछूत माने जाने वाले व्यक्तियों के प्रति स्नेह तथा अनुराग की अभिव्यक्ति कर पूरे देश में एकता के संदेश का प्रचार-प्रसार किया। उन्होंने गुह निषाद, एक दलित, को गले लगाया और उसको अपने सबसे घनिष्ट मित्र की पदवी दी। भीलनी शबरी के झूठे बेर भी स्नेहपूर्वक खाकर उन्होंने छुआछूत के विरुद्ध एक प्रबल संदेश दिया। उन्होंने अपनी पत्नी व बच्चों की देखरेख एवं दीक्षा के लिए महर्षि वाल्मीकि के पास भेज दिया जो एक महान विद्वान एवं खगोलशास्त्री थे। श्रीराम ने बुराई के ऊपर अच्छाई की विजय का उत्तरदायित्त्व लिया एवं उस ध्येय में सफलता भी प्राप्त की। उन्होंने ऋषि मुनियों को सम्मान पूर्वक जीवन जीने का अधिकार देने के लिये हर संभव सहायता की। वह छोटे राजाओं का राजपाट बहाल करवा कर भारत के महान एकीकरण का कारक बने।

वाल्मीकीय-रामायण में वर्णित ग्रहीय सन्दर्भों के खगोलिक तिथि निर्धारण एवं पुरातत्व विज्ञान, भूविज्ञान, समुद्र विज्ञान, एवं भूगोल से प्राप्त साक्ष्यों एवं वंशावलियों व जीनोम अध्ययनों से इस बात की पुष्टि होती है कि श्रीराम का जन्म वास्तव में लगभग 7100 वर्ष पूर्व हुआ था। इसलिए, श्रीराम के जीवन से जुड़ी वस्तुओं की भौतिक खोज अत्यधिक कठिन होगी क्योंकि प्राकृतिक विनाश जैसे बाढ़, सूखा, भूकंप, सुनामी इत्यादि ने इतने वर्षों में यह सब साक्ष्य मिटा डाले होंगे। परन्तु इस कारण से क्या हमें अपनी समृद्ध सांस्कृतिक विरासत के बारे में अन्वेषण पर रोक लगा देनी चाहिए?

भारतीय होने के नाते हमें इस बात पर गर्व होना चाहिए कि भारतीय सभ्यता इस पृथ्वी पर विकसित अत्यंत प्राचीन सभ्यता है। यह निश्चय ही 10000 वर्ष से अधिक प्राचीन है एवं भारतीय उपमहाद्वीप में ही विकसित हुई है। हमें स्वीकार करना चाहिए कि ब्रिटिश राज

में हमारी शिक्षा मैकाले के विचारों पर आधारित थी जिसके अनुसार भारतीय लोग अंग्रेजों से निम्नतर थे और "पूरा भारतीय साहित्य अंग्रेजी की एक पुस्तक की आलमारी के बराबर भी नही है।" यदि भारतीय भाषाओं एवं मध्य एशिया की भाषाओं में कुछ समानताएँ हैं तो उनका तात्पर्य यह लगाया गया कि आर्य मध्य एशिया से भारत में आए और यहाँ बस गए। किसी ने भी अन्य प्रकार से सोचने का साहस नहीं किया। इसलिए इस बात की अत्यंत आवश्यकता है कि इतिहासकार, वैज्ञानिक गण एवं अन्य बुद्धिजीवी भारतीय साहित्य को मिथ्या अथवा धार्मिक कपोल कल्पित कहानियाँ मानना बन्द करें। इस बात की आवश्यकता है कि वे सब साक्ष्य जो भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति पर प्रकाश डालने में सहायक हैं, एकत्रित किये जाएँ। इसके परिणाम स्वरूप वेदों एवं उत्तरवैदिक साहित्य से ऐसी जानकारियाँ खोजी जा सकती है जिनके प्रयोग से प्रकृति के अनुकूल प्रौद्योगिकी का विकास सम्भव हो पाएगा। इस आशय से सरकार से अनुरोध है कि हमारे प्राचीन साहित्य में वर्णित प्राचीनतम घटनाओं पर शोध के लिए ऐसे बहु-विषयक शोधदल का गठन करें जिसमें संस्कृत विद्वान, खगोलविद्, पुरातत्त्वशास्त्री, भू-वैज्ञानिक, समुद्रविज्ञानी, पुरा-वनस्पति वैज्ञानिक, मानववैज्ञानिक एवं अंतरिक्ष वैज्ञानिक एक साथ कार्य करें। इस दल को भारतीय उपमहाद्वीप के वैज्ञानिक साक्ष्यों पर आधारित इतिहास की पुनर्रचना का कार्य सौंपा जाना चाहिए।

इस बात की आवश्यकता है कि हमारा प्रिण्ट एवं इलेक्ट्रॉनिक मीडिया इन तथ्यों की ओर ध्यान दे और ऐसा माहौल बनाए जो हमारे युवाओं को प्राचीन भारतीय सभ्यता एवं ज्ञान के बारे में अन्वेषण के लिए, और खोज के परिणामों को विश्व के सम्मुख निर्भय होकर प्रस्तुत करने के लिए, प्रोत्साहित करे।

हिंदी सन्दर्भ ग्रंथों की सूची

राम अवतार शर्मा, 2010, श्रीराम वन गमन स्थल, नई दिल्ली: श्रीराम सांस्कृतिक शोध संस्थान ट्रस्ट।

पुष्कर भटनागर, 2012, श्री राम के युग का तिथि निर्धारण: भगवान राम के जीवनकाल की वास्तविक तिथियों की खोज, (हिंदी अनुवाद-डॉ. कृष्णानंद सिन्हा), नई दिल्ली: इंस्टिट्यूट ऑफ़ साईंटिफिक रिसर्च ऑन वेदाज (आइ-सर्व)।

सीता राम राय बहादुर, 1932, अयोध्या का इतिहास, नई दिल्ली: करोल बाग, आर्य बुक डिपो।

श्रीमद् वाल्मीकीय रामायण (भाग एक-दो), गोरखपुर: गीता प्रेस।

अंग्रेजी सन्दर्भ ग्रंथों एवं शोध पत्रों की सूची

Ayodhya Matter Ram Janam Bhumi, Mathur Law House.

Bhatnagar, Pushkar. 2004. *Dating the Era of Lord Ram: Discovering the actual dates of the life time of Lord Ram.* New Delhi: Rupa and Company.

Cavalli-Sforza, L.L. 2001. *Genes, Peoples and languages.* London: Penguin.

Cavalli-Sforza, L.L. and **Francesco Cavalli-Sforza.** 1995. *The Great Human Diasporas: The History of Diversity and Evolution.* Helix Books.

Kak, Subhash. 2010. *The Astronomical code of the Rigveda.* New Delhi: Munshiram Manoharlal Publishers Pvt. Ltd.

Kalyanaraman, S. (ed.) 2007. *Ram Sethu.* Chennai: Rameshwaram Ram Sethu Protection Movement.

Kennedy, Kenneth A. R. 2000. *God – Apes and Fossil Men: Paleoanthropology of South Asia.* USA: University of Michigan Press.

Lal, B.B. and **K.N. Dikshit.** 1978-79. Sringaverapura: A Key-site for the Protohistory and early history of the Central Ganga Valley. *Puratattva* 10: 1-7.

Lal, B.B. 1993. *Excavations at Sringaverapura (1977-86).* New Delhi: Memoirs of the Archaeological Survey of India, No. 88, Vol 1.

Lal, B.B. 2008. *Ram: his Historicity, Mandir and Setu (Evidence of Literature, Archaeology and Other Sciences).* New Delhi: Aryan Book International.

Misra, V.D., J.N. Pal, M.C. Gupta and **P.P. Joglekar.** 2009. *Excavation at Jhusi (Pratisthanpur) A Fresh Light on the Archaeological profile of the Middle Gangetic Plain.* New Delhi: Indian Archaeological Society: Special Report No. 3.

Nigam, R. 2011. Sea Level Fluctuations during last 15000 years and their Impact on Human Settlements. *Paper presented in a National Seminar on Scientific Dating of Ancient Events before 2000 BC* at New Delhi on 31st July, 2011.

Pal, J.N. 2007-2008. The Early Farming Culture of the Middle Ganga Plain with Special Reference to the Excavation at Jhusi and Hetapatti. *Pragdhara* 18: 263-281.

Rao, N. 1990. *Date of Shri Rama,* International Society for the Investigation of Ancient Civilizations, Mount Road, Madras.

Schwartzberg, Joseph E. 1992. *Historical Atlas of South Asia.* Oxford University Press

Sharma, G.R., V.D. Misra, D. Mandal, B.B. Mishra and **J.N. Pal.** 1980. *Beginning of Agriculture.* Allahabad: Abhinash Prakashan.

Swamy, Subramanian. 2008. *Ram Setu: Symbol of National Unity.* New Delhi: Har-Anand Publication.

Tewari, Rakesh, R.K. Srivastava and **K.K. Singh.** 2001-2002. Excavation and Lahuradeva, District Sant Kabir Nagar, *Puratattva* 32: 54-62.

Yadava, M.G., K.S. Saraswat, I.B. Singh and **R. Ramesh.** 2007. Evidence of Early Human Occupation in the Limestone Caves of Bastar, Chhattisgarh. *Current Science* 92 (6): 820-823.

संगोष्ठी के छायाचित्र

महामहिम डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम का स्वागत करते हुए आइ-सर्व के अध्यक्ष श्री के.वी. कृष्णमूर्ति।

30 जुलाई, 2011 को संगोष्ठी के उद्घाटन अवसर पर शोध विषय का संक्षिप्त परिचय देते हुए श्रीमती सरोज बाला।
मंच पर विराजमान विशिष्ट अतिथि-गण (बाँए से) न्यायमूर्ति माननीय श्री अशोक भान, भूतपूर्व राष्ट्रपति डॉ. ए.पी.जे.
अब्दुल कलाम, श्री के.वी. कृष्णमूर्ति (अध्यक्ष, आइ-सर्व) एवं श्री जवाहर सरकार (सचिव, संस्कृति मंत्रालय)।

पुस्तक का विषय सार

रामायण तथा ऋग्वेद में वर्णित महत्त्वपूर्ण घटनाओं के खगोलीय संदर्भों की प्लैनेटेरियम सॉफ्टवेयर के माध्यम से सही तिथियाँ निर्धारित की गई हैं।

ये आकाशीय दृश्य सम्बन्धित स्थान (अक्षांश व रेखांश) से 7100 वर्ष पूर्व के आसपास क्रमिक रूप से देखे जा सकते थे।

इन क्रमिक तिथियों का आश्चर्यजनक पुष्टीकरण पुरातत्त्व, पुरावनस्पति, भूविज्ञान, रिमोट सेंसिग तथा आनुवांशिक अनुसंधानों से किया गया है।

समुद्र वैज्ञानिको के अनुसार 7000-7200 वर्ष पूर्व समुद्र का जलस्तर लगभग 3 मीटर नीचे था, अतः रामसेतु का उपयोग भूमार्ग के रूप में किया जा सकता था।

संपादको के विषय में

श्रीमती सरोज बाला, भारतीय राजस्व सेवा के 1972 बैच की अधिकारी रही है। वह पिछले कई वर्षों से प्राचीन वेदों एवं महाकाव्यों में वर्णित प्राचीन घटनाओं की ऐतिहासिकता पर वैज्ञानिक शोध में पूरे समर्पण के साथ संलग्न रही है। ''ऋग्वेद से आर्यभटीयम् तक वर्णित घटनाओं का वैज्ञानिक ढंग से तिथि निर्धारण'' अनुसंधान परियोजना की संकल्पना उन्होंने ही की है। वह ही इस परियोजना की मुख्य अनुसंधान समन्वयक भी है।

श्री अशोक भटनागर, भारत मौसम विज्ञान विभाग के कलकत्ता स्थित खगोल विज्ञान केन्द्र (Positional Astronomy Centre) के भूतपूर्व निदेशक हैं एवं विभाग से सन 2010 में अवर-महानिदेशक पद से सेवा निवृत हुए। उन्होंने 1970 में उस्मानिया विश्वविद्यालय से Astronomy and Astrophysics में M.Sc. की। अपने 39 वर्ष के कार्यकाल में 26 वर्ष उन्होंने खगोलविज्ञान के क्षेत्र में कार्य किया। वह ऐस्ट्रानामिकल सोसाइटी आफ इण्डिया के सदस्य हैं।

श्री कुलभूषण मिश्र, एक युवा पुरातत्ववेत्ता है जो वर्त्तमान में भारतीय पुरातत्व परिषद, नई दिल्ली में रिसर्च एसोसिएट के रूप में कार्यरत है। इन्होंने स्वर्गीय डॉ. एस. पी. गुप्ता के साथ संयुक्त रूप से ''प्रैक्टिकल डिक्शनरी आफ इंडियन आर्ट, आर्किटैक्चर एण्ड आर्कियालोजी'' शीर्षक से एक पुस्तक का लेखन किया है। इन्होनें प्रतिष्ठित पुरातात्विक शोध पत्रिकाओं में कई शोध पत्र प्रकाशित किये है। आप वर्त्तमान में ''एट्लस ऑफ इन्डस-सरस्वती सिविलाइजेशन'' रिसर्च प्रोजेक्ट में मुख्य अन्वेषक के तौर पर संलग्न है।

मूल्यः ₹ 150/-

वेदों पर वैज्ञानिक शोध संस्थान

(Recognised as SIRO by DSIR & notified u/s 35(1)(ii) of Income Tax Act)